# फासीवादी दौर में महिलाओं पर बढ़ता उत्पीड़न और महिला मुक्ति का प्रश्न

- प्रोलेतारियन रिऑर्गनाइजिंग कमेटी, सीपीआई (एमएल)

***30 दिसंबर 2024 को आसनसोल बार एसोसिएशन हॉल, पश्चिम बर्धमान, पश्चिम बंगाल में कॉमरेड सुनील पाल की 15वीं शहादत वर्षगांठ के अवसर पर पीआरसी, सीपीआई (एमएल) तथा इफ्टू (सर्वहारा) द्वारा उपर्युक्त विषय पर आयोजित केंद्रीय कन्वेंशन में पेश आधार पत्र।***

*मूल दस्तावेज़ अंग्रेजी में है जिसका यह हिंदी में अनुवादित संस्करण है।*

---

## भूमिका

हाल के दिनों में महिलाओं पर होने वाले हमले बड़े पैमाने पर बढ़ रहे हैं।[1] इसके साथ ही समाज में पितृसत्ता भी तेजी से पैठ बना रही है। फासीवाद के सत्ता में आने के साथ ही दोनों ही सबसे विकृत रूपों में बढ़ रहे हैं। इसके अलावा, जो नए संकेत मिल रहे हैं वो भी काफी चिताजनक और परेशान करने वाले हैं। **फ्रंटलाइन** के हालिया संपादकीय नोट में खुलासा किया गया है कि बलात्कार के साथ पोर्नोग्राफी को जोड़ने का चलन चल रहा है।[2] इसमें कहा गया है,

> *"कोलकाता की घटना के बाद, भारत के लिए गूगल ट्रेंड्स डेटा ने पीड़िता के बलात्कार के वीडियो और पोर्नोग्राफ़ी साइटों पर उसके नाम की खोजों में कथित तौर पर वृद्धि दिखाई, यह परिघटना 2019 में भी सामने आई थी जब हैदराबाद में एक महिला पशु चिकित्सक के साथ बलात्कार किया गया और उसकी हत्या कर दी गई थी। इसमें निहित दृश्यरतिकता (voyeurism) अपने आप में अस्वस्थ है, लेकिन इसमें यह भी जोड़ दें कि "बलात्कार" और "पोर्नोग्राफी" को आपस में जोड़ कर देखा जा रहा है तो हम वास्तव में एक बहुत ही बीमार समाज को देख रहे हैं।"*

---

[1] एनसीआरबी वार्षिक रिपोर्ट 2022: भारत में महिलाओं के खिलाफ अपराध के 4,45,256 मामले दर्ज किए गए (हर 51 मिनट में एक!), जिसमें 'पति द्वारा क्रूरता' (31.4%), 'अपहरण' (19.2%), 'असॉल्ट' (18.7%), और 'बलात्कार' (7.1% या 31,516) शामिल हैं।

पिछले कुछ वर्षों में ये संख्या बढ़ी ही है, लेकिन अध्ययनों से पता चलता है कि भारत में बलात्कार के केवल 6% मामले ही रिपोर्ट किए जाते हैं, जिससे वास्तविक संख्या प्रति वर्ष लगभग 5.5 लाख बलात्कार या हर मिनट एक बलात्कार की हो जाती है! (bbc.com/news/magazine-38796457)

[2] वैष्णा रॉय, "लड़कों को कौन शिक्षित करेगा?" (Who will educate the boy child?) (फ्रंटलाइन, 3 सितंबर 2024)"

नोट में यह भी कहा गया है –

> *"संस्कृति, गीत, मीम्स, चुटकुले या अर्जुन रेड्डी और एनिमल जैसी फिल्मों के माध्यम से, महिलाओं के खिलाफ हिंसा और हिंसा के प्रेम का चरम रूप होने के भयावह विचार को नियमित रूप से महिमामंडित करती है। अगर हम मनोवैज्ञानिक अल्बर्ट बांडुरा के इस आधार को लागू करें कि मनुष्य अवलोकन के माध्यम से व्यवहार सीखते हैं, जो वे देखते और सुनते हैं, उससे सीखते हैं, तो यह स्पष्ट है कि बलात्कार को स्वीकार्य व्यवहार के रूप में कितनी आसानी से सीखा जाता है - शराब पीने वाले दोस्तों से, रेप पोर्न और बलात्कार के चुटकुलों के फॉरवर्ड से, महिलाओं को नीचा दिखाने वाली फिल्मों की बाढ़ से, और उन घरों में जहां महिलाओं को पारंपरिक रूप से नजरअंदाज किया जाता है। यह प्रवृत्ति विशेष रूप से उन समाजों में देखी जाती है जो युद्ध संस्कृति और मर्दाना दिखावेबाजी में आनंद लेते हैं, जो आज भारतीय परिवेश में आम हो गया है।"*

दिल्ली में 16 दिसंबर 2012 को निर्भया बलात्कार की घटना के बाद भी इसी तरह के शोध-आधारित तथ्य सामने आने लगे थे, जिससे पता चलता था कि बलात्कारी इतनी बर्बरता क्यों करते हैं।[3] इसमें *दृश्यरतिकता (voyeurism)* की भावना अंतर्निहित है, इसलिए यह हमारे समाज में बहुत गहरी सड़न - पूर्ण सामाजिक-सांस्कृतिक विघटन और नैतिक-

---

[3] *"बलात्कार के साथ अकल्पनीय हिंसा और भीतरी अंगों के साथ बर्बरता उन वीभत्स पोर्न वीडियो की तर्ज पर हो रही लगती है , जिनमें औरतों के साथ हिंसक से हिंसक सेक्स दिखाया जाता है। पंद्रह साल की बच्ची के साथ हुई हैवानियत पोर्न वीडियो चलाकर करने की बात बलात्कारियों ने स्वीकारी है। ऐसे कुछ वीडियो में बलात्कार करते -करते बच्चियों, लड़कियों, औरतों को मार डाला जाना दिखाया जाता है। भरत डोगरा ने हाल ही में जापान के एक अध्ययन के हवाले से यह बताया है कि कैसे वहां अस्सी के दशक के मध्य से ही पोर्नोग्राफी आसानी से उपलब्ध होने लगी तो बलात्कार और यौन-हिंसा के अपराध बढ़ने लगे, जबकि अन्य किस्म के अपराध कम हुए। ऐसे पोर्न वीडियो आज खासे लोकप्रिय हो रहे हैं। हर तबके में और अपने गांव-घर-परिवार से उजड़ कर शहरों में काम की तलाश में आये नौजवानों के बीच भी।"*

जेन ब्रेमेन द्वारा हीरा तराशी मजदूरों की निजी यौन जिंदगी में पश्चिमी सेक्स -बाजार के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के बारे में जिस तरह का इशारा किया गया था, वह भी इसी बात को साबित करता है। जेन ब्रेमेन के इस अध्ययन से यह भी पता चलता है कि किस तरह इस बाजार ने श्रमजीवियों की कठिन जीवन-परिस्थितियों का उपयोग अपने आत्म-विस्तार के लिए करना बहुत पहले ही शुरू कर दिया था। वे लिखते हैं- *"मैंने पाया कि सूरत के बाजार में एक नया पोर्न कैसेट पहुंचा था। तरह-तरह के ढेर सारे पोर्न कैसेट पहले ही खुलेआम उपलब्ध थे। महज दो सौ रुपये में उपलब्ध इस सामग्री की बड़ी भारी मांग है। खासकर हीरा तराशने वाले मजदूरों के बीच। जिन कारखानों में ये नौजवान काठियावाड़ी काम करते हैं वे नियमित स्वेटशॉप्स है, जहां उनसे जम कर काम लिया जाता है। काम खत्म होते ही रात को कारखाना उमस भरी मांद में बदल जाता है। लड़के तो लड़के ही रहेंगे। खासकर जब वे अकेले रह रहे हों और उनके संगी -साथी भी लड़के हों। सब मिलकर पैसे जमा कर खाली वक्त में औरतों की ये गंदी तस्वीरें और फिल्में देखते हैं। इनमें से एक शौकीन ने दिसम्बर 1992 के शुरू में मेरा ध्यान एक नई वीडियो क्लिप की ओर खींचा। यह परपीड़क [सैडिस्टिक] पोर्न कैसेट पश्चिम से आई थी। इसकी ढेर सारी कॉपियां तैयार की गई थीं। इसमें एक नौजवान द्वारा गोरे नस्ल और भूरे बालों वाली लड़की के साथ बलात्कार दिखाया गया था , जो क्रूर बलात्कार के दौरान ही मर जाती है।"* (स्रोत: *'फ़िलहाल'* पत्रिका, 2013)

वैचारिक पतन[4] - का संकेत है। इसलिए हमने देखा कि निर्भया कांड के व्यापक विरोध के बाद भी हिंसक बलात्कार की ऐसी वीभत्स घटनाओं में कोई कमी नहीं आई; तब भी जब इन विरोधों की आग पूरी तरह से ठंडी नहीं पड़ी थी।[5]

बेशक, इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह पतनशील, परजीवी और भ्रष्ट पूंजीवाद के लगभग पूर्ण क्षय द्वारा पैदा हुआ है और प्रतिदिन पैदा हो रहा है, और यह इस तथ्य का परिणाम है कि आज के सड़े हुए पूंजीवाद और उसके व्यापक बाजार ने, अपने सुपर मुनाफे की खोज में शुरुआत से ही पूंजी के चहेते टार्गेट 'श्रम' के अलावा, महिला शरीर पर भी अपना निशाना साध लिया है। फलता-फूलता पोर्नोग्राफी बाजार और कुछ नहीं बल्कि इसका ही परिणाम है, जिसका खतरा विशेष रूप से बढ़ते फासीवादी आक्रमण के समय में स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

इसके अलावा, हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष *जब तब* दिखाई देते हैं, खासकर तब जब वीभत्स बलात्कार की कोई विशेष घटना हमारे दिलोदिमाग पर गहरा प्रभाव डालती है, लेकिन ऐसा कोई संघर्ष देखने को नहीं मिलता है जो समाज में इस सड़ांध और इस सड़ांध के मूल कारण पर हमला करता हो। यहां तक कि अगर इसके खिलाफ संघर्ष होता भी है, तो अक्सर उसमें यह भुला दिया जाता है, शायद नारीवाद के प्रभाव में, कि ऐसा सामाजिक-सांस्कृतिक और नैतिक पतन केवल एक सामाजिक-सांस्कृतिक और नैतिक परिघटना नहीं है। इसके पीछे

---

[4] यहाँ नैतिकता (morality) से हमारा तात्पर्य एक नैतिक विचारधारा से नहीं है जो समाज पर, पूरी तरह या आंशिक रूप से, तमाम कड़े और निरंकुश (नैतिक) मूल्यों का पालन करने की माँग को थोपता है। नैतिकता की मार्क्सवादी समझ यह है कि यह किसी व्यक्ति के व्यवहार या लोगों के पारस्परिक संबंधों का एक गुण है जिसे सामाजिक-ऐतिहासिक रूप से निर्धारित संदर्भ में लिया जाता है, यानी इसे सामाजिक-ऐतिहासिक गति के संबंध में लिया जाना चाहिए और इसलिए वर्ग समाज में वर्गों के संदर्भ में समझा जाना चाहिए। यदि मनुष्य अमूर्त नहीं है, तो उसकी नैतिकता कैसे अमूर्त हो सकती है? मनुष्य की नैतिकता निश्चित रूप से ऐतिहासिक तौर पर निर्धारित सामाजिक अस्तित्व से निर्धारित होती है। यह अलग-अलग परिस्थितियों में और समाज में उस व्यक्ति के वर्ग की स्थिति के अनुसार अलग-अलग होगी। इस अर्थ में, समाज में प्रचलित कोई भी आदर्श, नैतिक मूल्य या सांस्कृतिक मानक इतिहास के किसी विशेष मोड़ पर मौजूद वास्तविक दुनिया का प्रतिबिंब है। यदि वास्तविक दुनिया बदलती है, तो नैतिकता या नैतिक मूल्य भी बदलेंगे। यही कारण है कि एक विशेष नैतिक मूल्य उभरता है, विकसित होता है और फिर गायब हो जाता है या गुणवत्ता के एक स्तर से दूसरे स्तर पर चला जाता है। ठोस ऐतिहासिक परिस्थितियों और प्रक्रियाओं से कट जाने पर नैतिकता अपना अर्थ और अस्तित्व दोनों खो देती है। नैतिकता एक युग से जुड़ी होती है और उसमें हमेशा उस युग की वर्गीय अंतर्वस्तु होती है। उस पर उन सामाजिक बंधनों की छाप होती है , जिनसे वह निकलती है। वर्गीय समाज में नैतिकता का सार यही है। **इसलिए यहाँ यह सहसंबंधित करना ज़रूरी है कि जब हम आज के नैतिक पतन और सड़न की बात करते हैं, तो हम पूँजीवादी समाज के लगभग पूर्ण सड़न की बात कर रहे हैं। इसका मतलब है कि हम नैतिकता की मृत्यु को वर्तमान पूँजीवादी-साम्राज्यवादी दुनिया के मूल विलक्षण के रूप में देखते हैं, जो इस समाज में उत्पादन के साधनों के स्वामित्व के बारे में निश्चित सामाजिक संबंधों के वास्तविक और वस्तुगत चरित्र को स्पष्ट रूप से उजागर करती है। इसलिए इस युग के नैतिक पतन के खिलाफ़ लड़ने का मतलब है इस समाज को समग्र रूप से बदलने और इसके अलग सामाजिक संबंधों पर पुनर्गठन के लिए लड़ना।**

[5] निर्भया कांड के बाद बलात्कार की ऐसी ही कई बर्बर घटनाएं कुछ ही महीनों बाद सामने आईं। 15 अप्रैल 2013 को दिल्ली में पांच साल की बच्ची के साथ बर्बरतापूर्वक सामूहिक बलात्कार किया गया। फिर 26 अप्रैल 2013 को दिल्ली के एक सार्वजनिक शौचालय में छह साल की बच्ची बेहोशी की हालत में मिली, उसका गुप्तांग काट दिया गया था। फिर 17 अप्रैल 2014 को मध्य प्रदेश के सिवनी जिले में पांच साल की बच्ची के साथ बलात्कार किया गया और उसकी गला घोंटकर हत्या कर दी गई। ऐसी घटनाओं की सूची लंबी है।

संकटग्रस्त एकाधिकार पूंजी के हित काम करते हैं जो इस दुनिया को महिलाओं के साथ-साथ पूरी मानवता के लिए नरक बनाने पर आमादा है। यहां तक कि पितृसत्ता के खिलाफ तथाकथित संघर्षों में भी यह बात भुला दी जाती है कि मौजूदा लैंगिक संबंधों के खिलाफ लड़ाई दरअसल बुर्जुआ निजी संपत्ति पर आधारित शोषण और उत्पीड़न की व्यवस्था के खिलाफ लड़ाई है, और इसलिए पितृसत्ता के खिलाफ लड़ाई को पूंजीवाद-साम्राज्यवाद को उखाड़ फेंकने और नए सामाजिक संबंधों पर समाज का पुनर्गठन करने की लड़ाई से जोड़ना होगा, जो ही पितृसत्ता को हमेशा के लिए खत्म करेगा। तभी इसके सामाजिक-सांस्कृतिक प्रभावों और साथ ही इसके साथ जुड़े नैतिक-वैचारिक पतन और गिरावट से निर्णायक रूप से और सफलतापूर्वक लड़ा जा सकेगा।

## पितृसत्ता और फासीवाद

फासीवाद के तहत बढ़ते पितृसत्ता की जड़ें पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण में हैं जो 19वीं सदी में फ्रांस में प्रचलित 'राष्ट्र' के उदार और लोकतांत्रिक दृष्टिकोण में मौजूद है, जिसके अनुसार *"फ्रांस के वैयक्तिक (पुरुष) निवासियों के तर्कसंगत हितों की अभिव्यक्ति ही राष्ट्र था।"*[6] कार्डिफ़ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर केविन पासमोर के अनुसार, पहला "राष्ट्रीय समाजवादी" (नेशनल सोशलिस्ट) फ्रांसीसी उपन्यासकार मौरिस बार्स थे। उन्होंने और बाद के दिनों में फासीवाद और नाज़ीवाद के अनुयायियों ने राष्ट्र के उपरोक्त उदार जनवादी दृष्टिकोण को अस्वीकार कर दिया, *लेकिन पूरी तरह से नहीं।* उन लोगों ने इस उदार जनवादी दृष्टिकोण का पितृसत्तात्मक पक्ष *(जिसके अनुसार राष्ट्र वैयक्तिक पुरुष निवासियों के तर्कसंगत हितों की अभिव्यक्ति था)* को स्वीकार किया और इस पर नस्लवादी आक्रामक राष्ट्रवाद के अपने विचार और दर्शन का निर्माण किया। मुसोलिनी के लिए यह स्वायत्तता (औतार्की)-आधारित राष्ट्रवाद या राष्ट्रीय क्रांति थी, जबकि हिटलर के लिए यह राष्ट्रीय समाजवाद था जिसका अर्थ है निर्लज्ज सुजननवादी (eugenicist) नस्लवादी राष्ट्रवाद।

हालांकि, इटली का बेनिटो मुसोलिनी ही था जिसने पहली बार फासीवाद के विचार को उसके निष्क्रिय चरण से राष्ट्रीय स्तर पर व्यवहार के क्षेत्र में उतारा और समाज में पुरुष वर्चस्ववाद को एक विशिष्ट पितृसत्ता के रूप में समेकित और संस्थागत किया। *एक नए प्रकार की समझौताविहीन क्रांति के लिए मजबूत इच्छाशक्ति और कार्रवाई करने वाले व्यक्तित्व के रूप में खुद को* पेश करना इसमें उसके लिए काफी मददगार साबित हुआ। ब्लैकशर्ट फासीवादी आंदोलन से शुरू होकर, जिसने मुसोलिनी को इटली का प्रधानमंत्री बनाने के लिए अक्टूबर 1922 को 'रोम पर मार्च' का आयोजन किया, फासीवादियों ने उपर्युक्त समझौताविहीन राष्ट्रीय स्वायत्त क्रांति की लहरों पर सवार होकर एक फासीवादी पितृसत्तात्मक अधिनायकवादी राष्ट्रवादी राज्य की स्थापना की जिसने महिलाओं को दोयम दर्जे का नागरिक बना दिया। इसके अनुसार महिलाओं को मुख्य रूप से रसोई के कमर तोड़ परिश्रम वाले काम सहित अन्य घरेलू कामकाज और इससे सीधे जुड़े खेती के काम तक खुद को सीमित रखना था। इसके लिए मुसोलिनी ने *खाद्य स्वायत्तता* का नारा दिया।

---

[6] केविन पासमोर, फासीवाद: एक बहुत छोटा परिचय (2002)। उद्धरण में "पुरुष" शब्द पर ध्यान दें।

हालांकि, 1929 में शुरू हुए आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक संकट के दौरान नाज़ीवाद की सफलता, जनवरी 1933 में हिटलर के नए चांसलर के रूप में सत्ता में आना, और फिर अंततः अंतिम राइकस्टैग के क्रोल ओपेरा हाउस सत्र के साथ जिसमें हिटलर ने तत्कालीन राष्ट्रपति पॉल हिडेनबर्ग के समर्थकों से राइकस्टैग की स्वीकृति के बिना कानून बनाने की शक्ति छीन ली, इस आश्वासन पर कि उनकी स्थिति और साथ ही राइकस्टैग के अस्तित्व को कोई खतरा नहीं होगा, 1890 के दशक में फ्रांस में शुरू हुआ फासीवादी आंदोलन वास्तव में वह बन गया जो वह था। वह कानून जिसने हिटलर को संविधान विरोधी कानून भी बनाने की शक्ति दी, उसे *एनेब्लिंग कानून* के रूप में जाना जाता था। इसने अपने सबसे नग्न रूप में नस्लवादी फासीवादी तानाशाही की नींव रखी। उसके बाद सब कुछ फ्यूहरर की इच्छा पर निर्भर था, जिसने सबसे खराब प्रकार के नस्लीय पुरुषवादी फासीवादी राज्य के निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया। इससे पहले नाजी आंदोलन द्वारा एक नस्लीय यूटोपिया बनाया गया, जिसने एक नस्लीय स्वप्न के निर्माण को जन्म दिया, जिसमें सबसे पहले सबसे शक्तिशाली जर्मन आर्यन नस्ल बनाने के लिए अंतहीन प्रयास शामिल था और जिसके लिए जरूरी था कि महिलाओं को केवल मातृत्व के दर्जे में बांधकर उन्हें उनके छोटे से क्षेत्र, घर, तक सीमित कर दिया जाये। उन्हें जर्मन आर्यन नस्ल की भावी सबसे शुद्ध और सबसे शक्तिशाली पीढ़ियों को जन्म देने और पालने का कार्य सौंपा गया। महिलाओं के जिम्मे यही मुख्य कार्यभार था । इसने जर्मनी की धरती से यहूदियों और स्लावों (Slavs) को पूरी तरह से खत्म करने और नाजियों और उनके स्वामी हिटलर के नेतृत्व में सबसे नस्लवादी जर्मन साम्राज्य के तहत अन्य सभी 'निम्न' नस्लों को अधीन करने के सबसे वहशी और सबसे अमानवीय प्रयासों को जन्म दिया। यह अंततः द्वितीय विश्व युद्ध का कारण बना, जिसमें हालांकि इसे अंततः 1945 में सोवियत यूनियन और उसके अंतरराष्ट्रीय सहयोगियों द्वारा पराजित किया गया। लेकिन तब तक यह मुख्य रूप से जर्मनी, सोवियत यूनियन और यूरोप - जो कि फासीवादी विजय युद्ध का मुख्य रंगमंच था - में असीमित तबाही और विनाश का कारण बन चुका था।

लेकिन 1990 के दशक के उत्तरार्ध से ही फासीवाद धीरे-धीरे दुनिया के विभिन्न हिस्सों में अपने पैर पसारने में सफल रहा है।[7] इसका नतीजा यह है कि 21वीं सदी के तीसरे दशक में हम एक बार फिर इस राक्षस के आमने-सामने खड़े हैं। हम इसे अलग-अलग देशों में बुर्जुआ संसदीय प्रणाली का उपयोग करके चुनाव जीतकर सत्ता में आते हुए देख सकते हैं। भारत में भी यही हो रहा है जहां बुर्जुआ संसदीय प्रणाली से चुनाव जीत कर सत्ता में आने के बाद फासीवादियों ने उसी प्रणाली को सांप्रदायिक-जातीय-नस्लीय घृणा-आधारित राष्ट्रवादी अभियानों की मदद से अपने कब्जे में कर लिया है और इस तरह के अभियानों से बुर्जुआ लोकतंत्र की नींव को वे दिन-प्रतिदिन नष्ट कर रहे हैं, और दूसरी तरफ विभिन्न प्रकार के आक्रामक सांप्रदायिक नैरेटिव चला कर विपक्षी बुर्जुआ दलों को ध्वस्त कर रहे हैं और उनके हिंदू जनाधार को उनसे छीन रहे हैं। और यह तब हो रहा है, जैसा कि केविन पासमोर ने सही कहा है, जब फासीवाद अभी भी "दुर्व्यवहार के लिए एक सर्व-उद्देश्यीय शब्द" है। आज भी यह मर्दानगी की (माचो) शैली अपनाता है, फिर भी यह महिलाओं को

[7] भारत में, बाबरी मस्जिद के विध्वंस की वीभत्स सांप्रदायिक घटना और उसके बाद पूरे भारत में हुए दंगों के बाद से हम इसे कदम दर कदम मजबूत होते हुए देख सकते हैं।

आकर्षित करता है। यह पुरुषों और महिलाओं को पुरानी परंपराओं का पालन करने के लिए कहता है, फिर भी यह उन्हें आकर्षित करता है। यह अनुशासन के नाम पर हिंसा फैलाता है, फिर भी शांतिप्रिय मध्यम वर्ग के लोग भी बाहरी और आंतरिक शत्रुओं से राष्ट्रीय सुरक्षा के नाम पर इसका अनुसरण करते हैं।

पितृसत्ता के दृष्टिकोण से देखा जाए तो, जैसा कि केविन पासमोर लिखते हैं, फासीवाद वास्तव में सामंती पितृसत्ता और वित्तीय पूंजी के सबसे प्रतिक्रियावादी तत्वों द्वारा फैलाई गई पितृसत्ता का मिलन बिंदु है। इसलिए फासीवाद को इतिहास का पश्चगमन भी कहा जाता है, जिसका रुख मध्ययुगीनता, धर्मतंत्रवाद और राजतंत्रवाद की ओर होता है, लेकिन इसका नेतृत्व वित्तीय पूंजी करती है। इसलिए हम फासीवाद में आधुनिकता-विरोधी सामंती हितों और आधुनिक बड़ी पूंजी के हितों को एक साथ गुंथे हुए देखते हैं। फासीवाद को न तो मध्ययुगीनता के तत्वों से और न ही पूंजीवाद के तत्वों से अलग किया जा सकता है। लेकिन यह कहना कि इसकी उत्पत्ति का आधार सामंती या बड़ा भूस्वामी वर्ग है, गलत है। इसकी उत्पत्ति का आधार निस्संदेह वित्तीय पूंजी के सबसे प्रतिक्रियावादी, सबसे आतंकवादी, सबसे अंधराष्ट्रवादी और सबसे साम्राज्यवादी तत्वों की अति-प्रतिक्रियावादी जरूरत है।

हम जानते हैं कि वेबेरियन (समाजशास्त्री मैक्स वेबर, 1864-1920, के अनुयायी) फासीवाद के उदय के लिए पूर्व-औद्योगिक या सामंती शासक वर्गों - पूर्वी जर्मनी या इतालवी पो घाटी के बड़े भूस्वामियों, दक्षिणी स्पेन के लैतीफंडिस्टों या जापानी सैन्य जाति - को दोषी ठहराते हैं।[8] उनका तर्क था कि ये अभिजात वर्ग राष्ट्रीय इतिहास के क्रम पर अपना घृणित प्रभाव डालने में सक्षम हो पाए क्योंकि उनके देश 19वीं शताब्दी में वास्तविक बुर्जुआ और उदार-जनवादी क्रांति से नहीं गुजरे थे।[9] लेकिन ऐसा क्यों? क्योंकि इन अभिजात वर्गों ने अपने आर्थिक और सामाजिक वर्चस्व को बनाए रखा था, क्योंकि जनवादी क्रांति को *नीचे से* जो कार्यभार पूरा करने थे, वे वास्तव में उन देशों में *ऊपर से* किए गए थे, यानी प्रशियाई मार्ग या पूंजीवादी विकास के जमींदार-बुर्जुआ मार्ग के माध्यम से।[10] केविन पासमोर लिखते हैं कि - *"इन अभिजात वर्गों ने शिक्षा [पर अपने एकाधिकार] का इस्तेमाल अपने प्रतिक्रियावादी [और पितृसत्तात्मक] मूल्यों को बाकी समाज में फैलाने के लिए किया, और अपनी [प्रतिक्रियावादी] स्थिति को बनाए रखने के लिए लगातार प्रतिक्रियावादी तरीकों का सहारा लिया।"*[11] **हालाँकि, यहाँ यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि इन अभिजात वर्गों के**

---

[8] भारत में भी मोदी और आरएसएस-भाजपा गठबंधन के संरक्षण में फासीवाद का उदय उन्हीं सामाजिक परिस्थितियों के परिणामस्वरूप हुआ जो पूर्वी जर्मनी में मौजूद थीं। यहां भी कृषि में पूंजीवादी विकास प्रशियाई पथ से हुआ। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि बीते वर्षों में महिलाओं पर अत्याचारों की मात्रा और गुणवत्ता में वृद्धि हुई है, जैसा कि एक फासीवादी सरकार और राज्य से अपेक्षित है जो कि पूर्ववर्ती सामंती मूल्यों और वित्तीय पूंजी के मूल्यों के मिश्रण के आधार पर उभरा है। और इसलिए भारत में महिला आंदोलन को एक और अधिक भ्रष्ट दुश्मन से जूझना होगा जैसा कि उसे जर्मनी में भी पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष में करना पड़ा था, क्योंकि ऐसा फासीवादी राज्य पितृसत्ता को नस्लीय-जातीय और सांप्रदायिक पितृसत्ता में बदलने की कोशिश करेगा।

[9] केविन पासमोर (ibid 6)।

[10] भारत के लिए भी यही सत्य है।

[11] ब्रैकेट के शब्द लेखक द्वारा जोड़े गए हैं।

**प्रतिक्रियावादी मूल्य वित्तीय पूँजी के उन सबसे घृणित तत्वों के प्रतिक्रियावादी मूल्यों के साथ मिल कर एक हो गए, जिन्होंने एक नग्न फ़ासीवादी तानाशाही स्थापित करने और जनतंत्र को खत्म करने के लिए मध्ययुगीनता का सहारा लिया ताकि वे अपने शासन को बरकरार रख सकें। इसी तरह, यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि प्रशियाई पथ से पूंजीवादी विकास की प्रक्रिया में अपना वर्चस्व बनाए रखने वाले पूर्ववर्ती सामंती वर्ग अंततः नए ग्रामीण पूंजीपति वर्ग में बदल गए, भले ही उन्होंने अपने पुराने सामंती सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों को बरकरार रखा। ऐसे गंभीर संकटों के समय में, जो कई बार वर्तमान संकट की तरह ही अनुत्क्रमणीय प्रतीत होते थे, वित्तीय पूंजी के सबसे घृणित तत्वों ने यही प्रवृत्तियां दिखाईं और इस प्रकार उनके जनतंत्र-विरोधी प्रतिक्रियावादी विचारों का विलय पुराने सामंती वर्ग से कृषि पूंजीपति वर्ग में परिवर्तित हुए वर्ग के विचारों के साथ आसानी से हो गया।**[12]

वेबरियन दृष्टिकोण कुल मिलाकर एक गलत दृष्टिकोण था। हालांकि यह सच है कि इसने फासीवाद को उसके सामाजिक संदर्भ में समझने में हमारी बहुत मदद की (जैसा कि केविन पासमोर लिखते हैं), खासकर यह कि कैसे यह महिलाओं को घरों और घरों से जुड़े पेशे से बांध देता है और उन्हें रसोई तक सीमित रखता है। बाद में, फासीवाद की इस पितृसत्तात्मक प्रकृति ने यूजेनिसिज्म में अपना अंतिम गंतव्य पाया, यानी महिलाओं के मातृत्व के दर्जे को **केवल** शुद्ध नृजातीय नस्लीय राष्ट्र के पुनरुत्पादन तक सीमित रखना। यह हमें ये समझने में मदद करता है कि कैसे जर्मनी के पुराने कुलीन वर्गों ने एकाधिकारी वित्त पूंजी के कप्तानों के साथ हाथ मिलाया और साथ मिलकर हिटलर और मुसोलिनी के सत्ता में प्रवेश को संभव बनाया, जिन्होंने नस्लवादी फासीवादी तानाशाही के रूप में एक नए अभिजात वर्ग को लाया जो पुराने अभिजात वर्ग से अधिक खूंखार था। यह महिलाओं के लिए बिलकुल नरक था, हालांकि यह भी तथ्य है कि बहुत सी महिलाओं ने भी इस तानाशाही की सराहना की थी जो अपनी गहरी भावनाओं और मातृत्व के दर्जे का उपयोग एक ऐसे नृजातीय

---

[12] केविन पासमोर लिखते हैं कि इन्होंने जनतंत्र, नारीवाद और समाजवाद की बढ़ती लहरों को कमज़ोर करने के लिए विरोधी जन आंदोलनों को प्रायोजित किया - *"जर्मन और इतालवी अभिजात वर्ग ने 1914 में अपने देशों को युद्ध में धकेल दिया, इस उम्मीद में कि देशभक्ति का जोश उन्हें अपने घरेलू दुश्मनों को कुचलने की अनुमति देगा।"* लेकिन ऐसा सोचना एक बड़ी गलती है कि तत्कालीन सामंती और बड़े भूस्वामी शासक वर्गों ने अपने देशों को युद्ध में धकेल दिया। यह उनके एकाधिकारवादी पूंजीपति वर्ग की इच्छा थी कि वे विश्व बाजार और कच्चे माल के स्रोतों पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए उपनिवेशों को हड़प लें, जिसके कारण उन्हें युद्ध का सहारा लेना पड़ा। फिर भी यह सच है कि साम्राज्य की इच्छा और जनतंत्र व समाजवाद के प्रति घृणा की भावना दोनों में समान रूप से मौजूद है - पूर्ववर्ती सामंती वर्ग से बने बुर्जुआ वर्ग में और सबसे विकसित पूंजीपति वर्ग में जो सबसे घृणित मूल्यों से ओतप्रोत है, और जिसका नेतृत्व वित्तीय पूंजी के सबसे खूंखार साम्राज्यवादी तत्वों द्वारा किया जाता है।

पासमोर लिखते हैं - "*[वेबरियनों का मानना था कि] फासीवाद मुख्य रूप से एक आधुनिकता-विरोधी आंदोलन था, जो पूर्व-औद्योगिक अभिजात वर्ग और निम्न पूंजीपति वर्ग के अभिसरण (कन्वर्जेन्स) से उत्पन्न हुआ था।*" लेकिन यह फिर से गलत है। फासीवाद वास्तव में पूर्व-औद्योगिक अभिजात वर्ग के पूर्व-औद्योगिक आधुनिकता-विरोधी मूल्यों व निम्न पूंजीपति वर्ग (जो एकाधिकार पूंजी के शोषण के बढ़ते जाल के कारण पूर्ण अधिग्रहण के कगार पर हैं) के हितों का एकाधिकारी पूंजीपति वर्ग के हितों के साथ अभिसरण का परिणाम था, जो ही श्रम और प्राकृतिक संसाधनों की दुनिया भर में लूट और उससे एकत्र धन की मदद से फासीवादी ताकतों को पोषित करके इसे एक जन आंदोलन में बदलने में सक्षम था।

नस्लीय राष्ट्र के निर्माण में करने में गर्व महसूस करती थीं, जो शुद्ध और शक्तिशाली होगा, किसी भी वंशानुगत बीमारी और कमजोरी से मुक्त होगा।

महिलाओं के बारे में फासीवादियों के मुख्य तर्क क्या हैं? महिलाओं के बारे में फासीवादियों के मुख्य तर्क परंपरागत हैं, जो सभी परंपरागत पितृसत्तात्मक पुरुषों और महिलाओं के बीच आम तौर पर मौजूद होते हैं। उनके तर्क वही हैं जिनके बारे में जर्मन मजदूर वर्ग के महान नेता और सिद्धांतकार ऑगस्ट बेबेल ने उन लोगों की आलोचना करते हुए लिखा था, जो मानते थे कि महिला प्रश्न का सामान्य सामाजिक प्रश्न से इतर कोई अलग अस्तित्व नहीं है। उनकी आलोचना में उन्होंने लिखा –

> *"कई लोग तो यहां तक दावा करते हैं कि ...महिला की स्थिति हमेशा एक जैसी रही है और भविष्य में भी वैसी ही रहेगी, क्योंकि प्रकृति ने उसे एक पत्नी और एक मां बनने और अपनी गतिविधियों को घर तक ही सीमित रखने के लिए नियत किया है। हर वह चीज जो उसके घर की चार संकरी दीवारों से परे है और जो उसके घरेलू कर्तव्यों से निकटता से जुड़ी नहीं है, उससे उसे कोई सरोकार नहीं होना चाहिए।"*[13]

यह विशुद्ध पूर्वाग्रह है। बेबेल लिखते हैं कि यह धारणा आदिम समाजों में महिलाओं को समाज में मिलने वाले दर्जे के बारे में अज्ञानता पर आधारित है, जो पुरुषों की तुलना में ऊँचा था। तब, महिलाएं पुरुषों के बराबर थीं। यह अज्ञानता न केवल पुरुषों में बल्कि महिलाओं में भी गहराई से व्याप्त है क्योंकि यह उन्हें पितृसत्तात्मक शासन के माध्यम से लगातार युगों से सिखाया गया है। हालाँकि, नाज़ीवाद और फ़ासीवाद ने इतिहास में किसी भी अन्य पितृसत्तात्मक विचारधारा की तुलना में अधिक ग्राह्य और श्रेष्ठतर तरीके से महिलाओं को केवल प्रजनन की वस्तु के रूप में[14] अवधारणा दी और उन्हें एक शुद्ध, स्वस्थ और श्रेष्ठ नस्ल का संरक्षक बनाकर राज्य के माध्यम से इसे संस्थागत बना दिया, जिसके कारण न केवल यहूदियों और स्लाव जैसी 'निम्न' नस्लों के खिलाफ युद्ध छेड़ा गया, बल्कि सबसे भयावह अंतर-नस्लीय युद्ध, यातना और हत्या के शिकार जर्मन नस्ल के निर्दोष पुरुष और महिलाओं को बनाया गया, जो जर्मन नस्ल के लोगों (पुरुषों, महिलाओं और यहाँ तक कि बच्चों) के भीतर "मूल्यहीन" और "मूल्यवान" श्रेणियों में विभाजन पर आधारित थी।[15] हम जानते हैं कि न केवल यहूदियों, बल्कि "मूल्यहीन" जर्मनों (पुरुषों और महिलाओं) को भी यातना शिविरों

---

[13] अगस्त बेबेल, 'महिला और समाजवाद' का परिचय (1879)

[14] सितंबर 1936 में नूर्नबर्ग पार्टी रैली में हिटलर ने कहा था, "यदि आज एक महिला वकील महान उपलब्धियां हासिल करती है और पास में ही एक माँ रहती है जिसके पाँच, छह, सात बच्चे हैं, और वे सभी स्वस्थ और अच्छी तरह से पले-बढ़े हैं, तो मैं कहूँगा: हमारे लोगों के शाश्वत लाभ के दृष्टिकोण से, वह महिला जिसने बच्चों को जन्म दिया और उनका पालन-पोषण किया और जिसने भविष्य में हमारे राष्ट्र को जीवन दिया, उसने ज्यादा कुछ हासिल किया है और अधिक कार्य किया है!" (जिल स्टीफेंसन, 'नाजी जर्मनी में महिलाएँ' 2014)

[15] विक्टोरिया डी ग्राज़िया ने 'हाउ फ़ासिज़्म रूल्ड वीमेन' (1992) में लिखा है कि *"नाज़ियों ने महिलाओं को नस्ल, संस्कृति और भावनाओं के संरक्षक के रूप में घर में वापस धकेल दिया, और उन्होंने समाज और घरेलू जीवन में गहरी पैठ बनाने के लिए अधिनायकवादी संगठनों का गठन किया। थर्ड राइक ने बेधड़क सुजननवादी (यूजेनिसिस्ट) सिद्धांतों को बढ़ावा दिया, और इसके*

(कंसंट्रेशन कैंप) में भेज दिया गया, डेथ स्क्वाड के सामने खड़ा कर दिया गया, या नारकीय स्थितियों में मरने के लिए डाल दिया गया।[16] इतना ही नहीं, रुचिरा गुप्ता लिखती हैं कि –

*"तथाकथित आर्यन नस्ल की 15 साल की लड़कियों को लेबेन्स्राम्स (छात्रावास जहाँ हिटलर यूथ द्वारा उनका बलात्कार किया जाता था ताकि वे युजेनिक्स के तहत बड़े पैमाने पर नीली आंखों व सुनहरे बालों वाले नाजी बच्चों को जन्म दे सकें) में भेज दिया जाता था। जैसे-जैसे राजनीतिक नेताओं के व्यभिचार सार्वजनिक होते*

---

*कार्यक्रमों का समापन एक भयावह नस्ल युद्ध में हुआ जिसका सर्वोपरि लक्ष्य ... महिलाओं और बच्चों को भी व्यवस्थित रूप से मारना था।"*

[16] ऐसे सभी तथ्यों की विस्तृत जानकारी के लिए हम यहां जिल स्टीफेंसन की ऊपर बताई गई किताब (ibid 14) का संदर्भ लेते हैं। उन्होंने लिखा कि नाजी आंदोलन किसी भी अन्य चीज से ज्यादा 'नस्ल' से जुड़ा था और उनका मानना था कि मानव जाति मुख्य रूप से विभिन्न नस्लों में विभाजित है। वे इस विभाजन को किसी भी अन्य विभाजन से अधिक मौलिक मानते थे। इसके पीछे एक खास कारण था। वे मानव जाति के नस्लीय विकास के उन छद्म वैज्ञानिक सिद्धांतों में विश्वास करते थे जो 1900 से प्रचलन में आ गए थे। तदनुसार, वे सोचते थे कि आर्यन नस्ल, जिसमें, जैसा कि उनका मानना था, अधिकांश जर्मन और साथ ही डच और स्कैंडिनेवियाई जैसे 'नॉर्डिक' लोग शामिल थे, सबसे श्रेष्ठ थी। लेकिन साथ ही, उन्होंने एक हौवा पैदा किया, मुख्यतः राजनीतिक कारणों से, कि इस सबसे श्रेष्ठ नस्ल को 'निम्न' नस्लों, जैसे स्लाव और यहूदियों, विशेष रूप से यहूदियों से खतरा था। अतः इसे संबोधित करने के नाम पर, उन्होंने 'निम्न' नस्लों के खिलाफ एक युद्ध शुरू कर दिया। लेकिन इसके लिए, जैसा कि उनकी गतिविधियों से समझा जा सकता है, उन्हें उस श्रेष्ठ नस्ल के भीतर भी युद्ध छेड़ना पड़ा ताकि उन लोगों से छुटकारा पाया जा सके जो इसके लिए योग्य नहीं थे , वफ़ादार नहीं थे, राजनीतिक-वैचारिक रूप से विश्वसनीय नहीं थे, व इसके लिए सक्षम नहीं थे। उन्होंने सोच विचार के आधार पर आर्यन नस्ल के लोगों को "मूल्यवान" और "मूल्यहीन" पुरुषों और महिलाओं में वर्गीकृत किया। उदाहरण के लिए, "मूल्यवान" वे लोग थे जिनके पास आर्यन पूर्वजों के माध्यम से अन्य नस्लों के लोगों से विवाह करने और प्रजनन करने के कारण कोई कथित 'वंशानुगत दोष' नहीं था। इसके अलावा, ऐसे शुद्ध आर्य भी "बेकार" हो सकते थे यदि वे 'असामाजिक' या वंशानुगत रूप से अस्वस्थ हों जिन्हें जीवन भर संस्थागत देखभाल और चिकित्सा सहायता की आवश्यकता हो। 'असामाजिक' वे लोग थे जो शराबी, समलैंगिक, आलसी थे और काम से कतराते थे। अकेली मांएं या यहाँ तक कि वे लोग जो नाज़ियों के बताए अनुसार अपने घर और परिवार को नियंत्रित नहीं कर सकते थे , उन्हें भी 'असामाजिक' और इसलिए "बेकार" माना जाता था। नाजी शासन में इन सभी का भविष्य अंधकारमय होता जा रहा था, क्योंकि नाजी शासन ने ऐसे कानून और अन्य सामाजिक-राजनीतिक प्रतिबंध बनाए थे, जो उन्हें "मूल्यवान" नागरिकों से अलग-थलग करते थे और उन्हें सभी सरकारी सहायता और कल्याणकारी योजनाओं से वंचित करते थे। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि उन्हें प्रजनन करने से रोक दिया गया था। इतना ही नहीं, जो लोग विरोध करते थे, उन्हें यातना शिविरों में भेज दिया जाता था, जहाँ वे भूख से दम तोड़ने के लिए विवश थे। उनमें से कई को तो सीधे हत्या या भयंकर यातनाओं के बाद मौत का सामना भी करना पड़ा। इनके अलावा, ऐसे लोग भी थे जो राजनीतिक रूप से अविश्वसनीय थे, जैसे केपीडी (कम्युनिस्ट पार्टी) या एसपीडी (सोशलिस्ट पार्टी) से जुड़े संगठनों के कार्यकर्ता, नाजीवाद के विरोधी, शांतिवादी और संदिग्ध लोग, और विशेष रूप से नारीवादी, जिन्हें नाजी घृणा की दृष्टि से देखते थे। ऐसे अविश्वसनीय तत्वों में से ज्यादातर को, जो हजारों और लाखों की संख्या में थे गिरफ्तारी, यातना, उत्पीड़न और मृत्यु का सामना करना पड़ा, भले ही वे शुद्ध आर्यन नस्ल के थे।

*गए और तलाक की दर लगातार बढ़ती गई, लेबेन्स्राम्स ने अविवाहित या परित्यक्त माताओं के लिए भी अपने दरवाजे खोल दिए।"*[17]

इस संबंध में, मुसोलिनी का फासीवाद कम से कम शुरुआत में अलग था। उसने महिलाओं को घर तक सीमित कर दिया, अन्य सभी क्षेत्रों से दूर रखा, उन्हें रसोई के कामों तक सीमित कर दिया और उन्हें केवल प्रजनन की वस्तु बना दिया, लेकिन *एक सौम्य तरीके से* यानी महिलाओं को कई बच्चों की माँ और घर की एकमात्र देखभाल करने वाली के रूप में अपनी घरेलू भूमिका निभाने के लिए सक्रिय रूप से प्रोत्साहित करके, और साथ ही उन्हें खाद्य स्वायत्तता की अपनी नीति की जीत के लिए महिलाओं को *सम्मानपूर्वक* इसका जिम्मेदार बनाकर, और इस नाम पर स्वायत्त इतालवी खाद्य पदार्थों के मुख्य कुकिंग एजेंट के रूप में उन्हें राष्ट्रीय भूमिका निभाने के लिए प्रेरित कर के। इसके लिए मुसोलिनी ने उन्हें धान की फसलों की खेती को छोड़कर कारखानों, विश्वविद्यालयों और समाज के सभी अन्य क्षेत्रों से बाहर निकाल दिया। यह सब करने में उसने माँ और देखभाल करने वालों के रूप में महिलाओं के लिए जैविक रूप से निर्धारित भूमिकाओं को लागू करने हेतु परिवार और धर्म के पारंपरिक प्राधिकार का सहारा लिया। लेकिन बाद में, जब वो 1930 के दशक के अंत में हिटलर के प्रभाव में आया तो 1937 में नस्लीय अंतर्संबंध पर रोक लगाने वाले नए फासीवादी कानूनों को लागू करने के साथ उसने भी नाज़ियों के समान ही यूजेनिक्स का समर्थन करना शुरू कर दिया।[18]

इसलिए, यह फासीवाद की प्रकृति है कि सभी तरह के फासीवादी अपने अंदर अंतर्निहित स्त्री-विरोधी वहशीपन के साथ शासन करते हैं, क्योंकि वे वित्तीय पूंजी के सबसे खूंखार प्रतिक्रियावादी तत्वों के प्रतिनिधि होते हैं, जो समानता और

---

[17] रुचिरा गुप्ता, '*फासीवाद के अंतर्गत नारीवाद*' (पॉलिसी वॉच, खंड 8, अंक 5, जून 2019)

[18] *'बिल्डिंग द न्यू मैन'* (फ्रांसेस्को कैसाटा, 2011) पुस्तक के चौथे अध्याय (क्वालिटी थ्रू क्वांटिटी: यूजेनिक्स इन फासिस्ट इटली) को देखें, जिसमें इस बहस का विस्तार से वर्णन किया गया है कि कैसे फासीवादी राजकीय नस्लवाद *सिद्धांत और व्यवहार* दोनों में मात्रा से गुणवत्ता (क्वांटिटी से क्वालिटी) की ओर बढ़ता गया, निकोला पेंडे (इतालवी वैज्ञानिक जो बाद में फासीवाद समर्थक बन गए) की यूजेनिक्स की आध्यात्मिक और बायोटाइपोलॉजिकल व्याख्या के माध्यम से, जो अभी भी "नॉर्डिक, अवधारणा-विरोधी चयनात्मक यूजेनिक्स" के विरोध में थी। हालाँकि विरोध केवल फॉर्म में था, जबकि उसका सार एक ही था।

पेंडे लिखते हैं – *"इसे (यूजेनिक्स विज्ञान की उनकी आध्यात्मिक और बायोटाइपोलॉजिकल व्याख्या को) कुछ यूजेनिसिस्ट विज्ञानिकों के कुख्यात यूजेनिक्स विज्ञान से एक नहीं समझना चाहिए, जो मानते हैं कि नस्ल को दूर के या आदिम जातियों के व्यक्तियों के रक्त को पतनशील आबादी के धड़ पर प्रत्यारोपित करके नस्ल को सुधारा या शुद्ध किया जा सकता है, या दोनों लिगों के उन व्यक्तियों की शल्य चिकित्सा द्वारा नसबंदी की वकालत करना जिनमें आनुवंशिक रूप से संक्रामक बीमारी है।"* (1939) उनका सिद्धांत ऑर्थोजेनेसिस का सिद्धांत था, जिसका अर्थ है *"मनुष्यों का नियमित, स्वस्थ और सामंजस्यपूर्ण गठन", "गर्भाधान के क्षण से, अंतर्गर्भाशयी जीवन की शुरुआत से ही मानव को वैज्ञानिक नियंत्रण में रखकर ... फिर, इस पहले गर्भाधान और जन्मपूर्व ऑर्थोजेनेटिक कार्य के बाद, गर्भवती मां के स्वास्थ्य के आधार पर, हम जन्म के पहले दिनों से विकास की सुरक्षा और सुधार के साथ आगे बढ़ते हैं , और यही होता है जन्म-पश्चात ऑर्थोजेनेसिस को लागू करना।"* इसमें, हम अन्य तरीकों और साधनों द्वारा शुद्ध नस्ल के विचार की पुनःप्राप्ति देख सकते हैं।

विक्टोरिया ग्राज़िया भी यह कहती हैं कि *"मुसोलिनी 1930 के दशक के अंत में हिटलर के [शुद्ध नस्ल के] प्रभाव में आ गया था।"* (ibid 15)

स्वतंत्रता के स्थान पर पूर्ण नियंत्रण और वर्चस्व स्थापित करने की कोशिश करते हैं और इसलिए ऐतिहासिक पश्चगमन की ओर एक सामान्य प्रवृत्ति रखते हैं, यानी समाज को चरम पितृसत्ता और मध्ययुगीन पाशविकता के दौर में वापस ले जाते हैं। इसलिए महिलाओं के अधिकारों और सम्मान पर हमले सामान्यीकृत हो जाते हैं, जिससे अक्सर बलात्कार ही नहीं, बलात्कार के साथ हत्या की घटनाएं भी आम हो जाती हैं। यह एक सामान्य घटना बन जाती है क्योंकि सदियों पुरानी पितृसत्ता की छाया में स्त्री-द्वेष और लैंगिक भेदभाव, जो कि फासीवादी विचारधारा के बढ़ते आक्रमण के समय में चरम पर पहुँच जाता है, समाज पर **हावी** हो जाता है। बलात्कार और हिसा एक दिन-प्रतिदिन का खतरा बन जाता है। संक्षेप में कहें तो आज की स्त्री-द्वेषी राजनीति की जड़ें विश्व पूंजीवाद के लगातार गहराते संकट की पृष्ठभूमि में हो रहे फासीवादी हमलों में हैं, जो आज के सामाजिक और सांस्कृतिक सड़ांध यानी दुनिया भर के समाज में हो रही चरम सड़ांध और क्षय के लिए जिम्मेदार है। सदियों पुरानी पितृसत्ता की छाया में , इसका स्वाभाविक निशाना महिलाएं हैं।

इसलिए हम देखते हैं कि सामाजिक-राजनीतिक आंदोलन के रूप में फासीवाद महिलाओं के लिए एक विरोधाभासी स्थिति पैदा करता है। नाजी जर्मनी में महिलाओं के उत्पीड़न का विशेष अनुभव, फासीवादी इटली की तुलना में अधिक साबित करता है कि फासीवाद (सामाजिक-राजनीतिक आंदोलन के रूप में) महिलाओं को न केवल अपना शिकार बनाता है, बल्कि अपना सहयोगी बना कर उन्हें खुद के साथ और जर्मन नस्ल की 'बेकार' या 'निम्न' नस्ल की किसी भी महिला के खिलाफ हिसा का अपराधी भी बनाता है। नतीजतन, इसने महिलाओं को "आज्ञाकारिता के साथ-साथ ताकत की लालसा" की ओर अग्रसर किया, जैसा कि क्लाउडिया कून्ज़ ने अपनी पुस्तक *मदर्स इन द फादरलैंड (1987)* में उल्लेख किया है। यह सही कहा गया है कि *"जर्मन इतिहास में कभी भी किसी राजनीतिक पार्टी में इतनी सारी महिलाएँ शामिल नहीं हुईं, और कभी भी किसी पार्टी ने महिलाओं को इतना अपमानित नहीं किया जितना कि नेशनल सोशलिस्ट पार्टी"* यानी नाज़ी पार्टी ने किया (जुर्गन कुचीन्सकी, ibid)। महिलाओं में गहरी आंतरिक प्रवृत्ति के रूप में अंतर्निहित मातृत्व, भावना और आत्म-संरक्षण के सार्वजनिक कल्ट के बारे में सदियों पुराने लोकप्रिय पूर्वाग्रहों का फायदा उठाने में फासीवादी माहिर हैं। इससे महिलाओं के बीच फासीवादी लोकप्रिय हो गए, जबकि उन्होंने शुरू से ही महिलाओं को सार्वजनिक जीवन से बाहर करने और उन्हें निजी क्षेत्र तक सीमित रखने की घोषणा की थी। इसलिए इससे यह निष्कर्ष निकालना गलत नहीं है कि फासीवादी दर्शन से प्रभावित होने के बाद महिलाओं ने ही *"हिटलर की खोज की, उसे चुना और उसे आदर्श बनाया"* (जोअकिम सी. फेस्ट, ibid)। और इसके लिए इतिहास को गवाह के तौर पर पेश किया जा सकता है। इसलिए वर्तमान पितृसत्ता विरोधी महिला आंदोलन के लिए फासीवादियों की राजनीतिक चतुराई में इस विशेष क्षमता पर ध्यान देना आवश्यक है। चाहे हिटलरी नाजीवाद हो या बेनिटो मुसोलिनी का फासीवाद, दोनों ने महिलाओं की मदद से महिलाओं पर शासन किया और साथ ही ऐसे कानून बनाए जिन्होंने महिलाओं को घर से बांध दिया। दोनों ने महिलाओं को मातृत्व और अपने घर व पति की देखभाल करने वाली एक सार्वजानिक कल्ट बना दिया। एक ने पारिवारिक संरचना और उसके प्राधिकरण में अंतर्निहित महिलाओं की पारंपरिक छवि का फायदा उठा कर ऐसा किया, जबकि दूसरे ने इसे पूरी तरह से नग्न रूप में, बेधड़क किया। एक ने महिलाओं को अधिक संख्या में प्रजनन के लिए घर के अंदर रखा (फासीवादी इटली में महिलाओं को यथासंभव अधिक बच्चे पैदा करने के लिए प्रोत्साहित किया

जाता था और सबसे अधिक बच्चे पैदा करने वालों को पुरस्कृत किया जाता था), जबकि दूसरे ने मात्रा और गुणवत्ता दोनों का प्रजनन करने के लिए ऐसा किया (नाजी जर्मनी में महिलाओं को नस्ल की शुद्धता को बरकरार रखने और सर्वश्रेष्ठ नस्ल का प्रजनन करने के लिए मजबूर किया गया)। संक्षेप में, फासीवादी तानाशाही की दोनों शक्तियों ने समान महिला-विरोधी राजनीति व नीतियों का अनुसरण किया।

यहाँ, प्रसिद्द इतिहासकार, सुविरा जयसवाल, की बात सुनना प्रासंगिक है, जो बताती हैं कि जब जाति व्यवस्था को बनाए रखने का लक्ष्य होता है तब भी महिलाओं की भूमिका नाजी जर्मनी में महिलाओं की तरह ही होती है, जिन्हें वहां शुद्ध नस्ल का संरक्षक बनाया गया था, यानी नस्ल को शुद्ध और स्वस्थ रखने की जिम्मेदारी उनकी थी। हालांकि जाति और नस्ल एक दूसरे के अनुरूप नहीं हैं और इसलिए जाति के निर्माण में महिलाओं की भूमिका शुद्ध और स्वस्थ नस्लीय राष्ट्र के निर्माण में महिलाओं की भूमिका के समान है, लेकिन बराबर या एक जैसी नहीं है। हालांकि, इस तथ्य का वास्तविक सार यह है: अगर जाति और नस्ल को शुद्ध और बरकरार रखना है तो महिलाओं को जबरन पृष्ठभूमि में धकेलना होगा और घरों तक सीमित करना होगा। अपने प्रसिद्ध निबंध *सवर्ण और अवर्ण की उत्पत्ति: 'दलित' समस्या की ऐतिहासिक जड़ें* (2019) में सुविरा जयसवाल कहती हैं -

> *"वस्तुत: उत्तर आधुनिकतावादियों ने इस बात पर जोर दिया कि जाति (प्रथा) के विरोध में तर्क देने का कोई औचित्य नहीं है क्योंकि यह 'विपक्षी राजनीति को गोलबंद करने के लिए' (डर्क्स 2006 : 314) सबसे नीचे के लोगों (इलैया 2009 : 28) का माध्यम बनती है।"*

वो आगे कहती हैं -

> *"जो भी हो, … जातीय अस्मिताओं को बनाये रखने की शुभेच्छापूर्ण दिख रही इन दलीलों में जातियों के आंतरिक ढांचे और कार्यपद्धति की पूरी तरह अवहेलना की गई है। यह प्रथा महिलाओं को अधीन बनाने तथा औरतों की लैंगिकता के प्रबंधन और नियंत्रण पर आधारित है जो जातियों के प्रजनन के लए एक बुनियादी आवश्यकता है।"*

इस प्रकार, यह अपरिहार्य है कि जाति व्यवस्था को बनाए रखने और किसी भी रूप में इसे पुनर्जीवित करने का प्रयास महिलाओं की कामुकता (sexuality) पर नियंत्रण को जन्म देगा। हम यहाँ देख सकते हैं कि जातिगत पहचान के पुनरुत्थान पर आधारित राजनीति किस तरह से फासीवादी राजनीति और विचारधारा के समान है। सुवीरा आगे लिखती हैं -

> *"मिसाल के तौर पर हरियाणा में जाट खाप पंचायतें 'ऑनर किलिग' के नाम पर उतपीड़न, मारपीट और हत्या को प्राय: उचित ठहराती हैं और कोई भी राजनीतिक दल इनकी भर्त्सना करने के लिए इसलिए तैयार नहीं होता क्योंकि इसका वोट की राजनीति पर असर पड़ता है। ... इस तरह की घटनाएं किसी जाति या क्षेत्र तक सीमित नहीं है। बताया जाता है कि सामाजिक श्रेणीबद्धता में जो जाति जितने ही निचले पायदान पर होती है,*

*उसकी जाति पंचायत उतनी ही मजबूत है और उसके पास लोगों को समाज से बहिष्कृत करने, उन्हें दंड देने, उन पर जुर्माना लगाने आदि का अधिकार उतना ही जयादा होता है। ... बसुधा धगमवार ने दर्शाया है कि कैसे जाति पंचायतें देश के कानून की पूरी तरह अवहेलना करते हुए 'पीट-पीटकर मार डालने' का फैसला सुना देती है और यह बात दलितों की जाति पंचायतों पर भी लागू होती हैं। ऐसे मामले सामने आए हैं जहां लोगों ने अपनी मर्जी से शादियां की हैं और यद्यपि ये शादियां समाज द्वारा स्वीकृत सजातीय समूहों के बीच ही हुई हैं लेकिन इनके लिए बड़े बुज़ुर्गों की स्वीकृति नहीं ली गयी और ऐसी हालत में दलितों की जाति पंचायतों ने उन्हें कठोर दंड दिया – यहां तक कि युवा दंपितयों की हत्या भी कर दी गई। (भागवत 1995)। यह अकारण नहीं है कि बाबा साहब अंबेडकर ने पूरी तरह जाति को समाप्त करने की बात कही और यह विचार व्यक्त किया कि इस उद्देश्य को अंतर्राजातीय विवाहों के जरिये ही प्राप्त किया जा सकता है।"*

जाति व्यवस्था का मतलब है ऊपर से नीचे तक जाति की शुद्धता बनाए रखना और इसलिए इसे तथाकथित रक्त की शुद्धता बनाए रखने की आवश्यकता है। यह नाज़ियों और फ़ासीवादियों के सुजननवादी (यूजेनीसिस्ट) दृष्टिकोण से बहुत अलग नहीं है। यह बिना कारण नहीं है कि फ़ासीवाद में जाति के पुनरुत्थान की राजनीति के लिए पर्याप्त जगह है। इस पर आधारित पूरी राजनीति और इसे अपनाने वाले नेताओं को फ़ासीवादियों द्वारा बहुत अच्छी तरह से समायोजित कर लिया जाता है। भारत में, जहाँ जातिगत पदानुक्रम अभी भी व्याप्त है, इसने पितृसत्ता के खिलाफ़ हमारी लड़ाई में हमारे सामने एक बहुत बड़ी चुनौती खड़ी कर दी है, खासकर तब जब मोदी शासन के तहत सभी प्रकार के प्रतिगामी हमले बिना किसी रोक-टोक के किए जा रहे हैं जो एक फासीवादी शासन से बहुत अलग नहीं है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि फासीवादी हमले पुरानी पितृसत्ता को नस्लवादी-नृजातीय-जातिवादी और सांप्रदायिक विचारधारा के साथ जोड़ते हैं और इस तरह नैतिक-वैचारिक और सामाजिक-सांस्कृतिक पतन और सड़न के नए निम्न स्तर पर राज करते हैं जो 21वीं सदी के अत्यंत पतनशील और परजीवी पूंजीवाद के कारण समाज में भीतर तक व्याप्त हो गया है। हमें इस तथ्य को स्वीकार करने से पीछे नहीं हटना चाहिए कि फासीवाद ऐसे सभी तरह के पतन की गर्त में सवार है जिसका अर्थ है कि अगर फासीवाद से सफलतापूर्वक नहीं लड़ा गया तो महिलाओं का जीवन पूरी तरह नरक बन जाएगा।

## निर्भया से अभया तक; कुछ चिताजनक प्रश्न

अभी कुछ समय पहले ही कोलकाता के आर. जी. कर मेडिकल कॉलेज और अस्पताल की 31 वर्षीय युवा महिला प्रशिक्षु डॉक्टर (जिसका नाम 'अभया' दिया गया) के साथ 9 अगस्त 2024 को हुए क्रूर बलात्कार और हत्या के बाद बंगाल ही नहीं बल्कि पूरे देश में गुस्सा फूट पड़ा। कोलकाता के डॉक्टरों, मेडिकल छात्रों और आम जनता ने इस जघन्य घटना के अपराधियों के खिलाफ़ जंग का मोर्चा खोल दिया था, और 14 अगस्त को आधी रात को कोलकाता की सड़कों पर महिलाओं का सैलाब उमड़ पड़ा और उन्होंने अपने होठों पर एक खास नारा - *'रात को वापस लो (रिक्लेम द नाईट)'* - के साथ पितृसत्ता को खुली चुनौती दी। यह वाकई वीरतापूर्ण था। ऐसी हर घटना का जवाब ऐसे ही प्रतिरोध प्रदर्शनों से दिया जाना चाहिए। ग्यारह साल पहले भी, 16 दिसंबर 2012 की रात को देश की राजधानी दिल्ली में चलती बस में

पैरामेडिकल छात्रा (जिसका नाम 'निर्भया' दिया गया था) के साथ हुए क्रूर बलात्कार के बाद महिलाओं ने सड़कों पर आकर खुलेआम पितृसत्ता का सामना करते हुए उसे चुनौती दी थी। उनका नारा था, *"मेरी आवाज़ मेरी स्कर्ट से भी ऊँची है।"* हालाँकि, जैसा कि ऊपर बताया गया है, ऐसे वीरतापूर्ण विरोध प्रदर्शन कुछ बहुत ही परेशान करने वाले सवाल भी खड़े करते हैं।

आखिर ऐसा क्यों होता है कि ऐसे वीरतापूर्ण प्रदर्शन उतना बड़ा आवेग नहीं पैदा कर पाते जो ऐसे आंदोलनों में रस्मअदायगी की एकरसता को तोड़ने के लिए आवश्यक ऊर्जा उत्पन्न करें और लोगों की चेतना को वहां तक उठा पाएं, जहां वो उस सामाजिक व्यवस्था के लिए संघर्ष में उतरें जो इस तरह के अत्याचारों के साथ-साथ खुद पितृसत्ता को ही *हमेशा-हमेशा* के लिए समाप्त कर देगी। चाहे यह कितना भी दर्दनाक क्यों न हो, हमें यह स्वीकार करना होगा कि एक तरह से ऐसे वीरतापूर्ण विरोध प्रदर्शन *अंततः* व्यर्थ साबित होते हैं। "रिक्लेम द नाइट" आंदोलन को देखें। यह भी बहुत आगे नहीं बढ़ पाया क्योंकि यह उपर्युक्त आवश्यक ऊर्जा और प्रेरणा - *वैचारिक-राजनीतिक प्रेरणा और आवेग* नहीं पैदा कर सका, भले ही कुछ रिपोर्ट दावा करती हैं कि यह अभी भी जारी है और बंगाल के कुछ समूह अभी भी पितृसत्ता के केंद्रीय मुद्दे पर समाज को उद्वेलित रहे हैं।

जो भी हो, यह एक कड़वी सच्चाई है, जैसा कि इतिहास में भी देखा गया है, कि ऐसे आंदोलन अक्सर कड़े कानून बनाने और अपराधियों को दंडित करने की मांग उठाने से आगे नहीं बढ़ पाते। हालांकि, यह समझना होगा कि सिर्फ कड़े कानून बनाने से पितृसत्ता खत्म नहीं हो सकती क्योंकि समाज की वस्तुगत परिस्थितियां यानी सामाजिक-आर्थिक संरचना जो ऐसे कानूनों को लागू करना संभव बनाती हो, मौजूद नहीं है। इसके लिए मौजूदा समाज को बदलने की जरूरत है यानी ऐसे आधार पर पुनर्गठित करने की जरूरत है जो पितृसत्ता और महिलाओं पर अत्याचार को बढ़ावा न दे। और इसलिए, इसके लिए समाज के मौजूदा शासक वर्गों को उखाड़ फेंकना आवश्यक है।

अब तक का नतीजा क्या रहा है? निर्भया के बलात्कार और हत्या के खिलाफ हुए वीरतापूर्ण विरोध प्रदर्शनों ने भाजपा के नेतृत्व में फासीवादियों को बेहद आवश्यक शक्ति प्रदान की (जैसा कि उसी दौरान चल रहे भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन ने भी किया था) और वे 2014 में सत्ता में आये। यह देखना होगा कि अभया के बलात्कार और हत्या मामले के खिलाफ आंदोलन बंगाल में भाजपा को कितना मजबूत करेगा। हालांकि, आज भी इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि इसने किसी और से ज्यादा भाजपा को ही मजबूत किया है। 1978 में ईरान में हुए महिलाओं के विशाल विरोध प्रदर्शनों का अनुभव भी ऐसा ही है। यह अंततः फरवरी 1979 में शाह को उखाड़ फेंकने वाली राजशाही-विरोधी और अमेरिका-विरोधी क्रांति में बदल गई। लेकिन लोकप्रिय अपेक्षाओं के साथ-साथ पश्चिमी मीडिया और यहां तक कि ईरानी बुद्धिजीवियों की अपेक्षाओं के विपरीत, *"इसने 'इस्लामी नारीवाद' को जन्म दिया और* हर

*जगह इस्लामी कट्टरवाद को बढ़ावा दिया, जो कि धार्मिक सत्ता के लिए प्रयासरत था और [जो कभी] साम्राज्यवाद के साथ मिलीभगत और [कभी] उनके साथ संघर्ष में रहता था।"*[19]

अक्सर यह तर्क दिया जाता है, और यह सही भी है, कि क्रांतिकारी आंदोलन और उसके घटकों की संगठनात्मक ताकत इतनी मजबूत नहीं है कि वे इन आंदोलनों को सही रास्ते पर चलने के लिए प्रभावित कर सकें - वह रास्ता जो वास्तविक अपराधी यानी पूंजी के शासन, जो अपने हितों के लिए पितृसत्ता को बढ़ावा देता है और महिलाओं पर जघन्य अत्याचार करता है, के खिलाफ गुस्सा जगाए। हालांकि, यह एक निर्विवाद तथ्य है कि वैचारिक और राजनीतिक कमजोरियों की ऐसी विफलताओं में अपनी भूमिका होती है। इसलिए, हमें नैतिक रूप से इतना मजबूत होना चाहिए कि सही वैचारिक-राजनीतिक दिशा-निर्देशन की कमी से उत्पन्न होने वाली कमजोरियों को इंगित कर सकें, जो अक्सर हमारे संगठनात्मक हस्तक्षेप की कमजोरी के लिए जिम्मेदार होती हैं। उदाहरण के लिए, अगर हमारा आंदोलन पितृसत्ता से सूक्ष्मता और सावधानी से लड़ने के लिए मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण और नारीवादी दृष्टिकोण के बीच अंतर के मूल को ध्यान में नहीं रखता है, वह भी बढ़ते फासीवाद के समय में, तो यह हमारे हस्तक्षेप को प्रभावित करेगा जो पहले से ही संगठनात्मक ताकत की कमजोरी से ग्रस्त है, और वांछित या इच्छित परिणाम नहीं लाएगा। जैसा कि हम पहले से ही जानते हैं कि विश्व सर्वहारा वर्ग के महान शिक्षक और नेता लेनिन इस बारे में बहुत सतर्क और सावधान थे। वह हमेशा **नारीवाद की बुर्जुआ प्रकृति को उजागर करने में स्पष्ट रहते थे।**[20]

नारीवाद, जो कि *मूलतः* महिला प्रश्न पर एक बुर्जुआ विचारधारा है और जो अपनी सभी विविधताओं में पूंजीवाद के निषेध के लिए प्रतिबद्ध नहीं है और लिग संबंधों को पितृसत्ता की व्यवस्था के रूप में नहीं देखता (शाहरज़ाद मोजाब),[21] न केवल संरचनात्मक विघटन को बल्कि परिवार और लिगों के बीच संबंधों के आध्यात्मिक (स्पिरिचुअल) विघटन को भी आगे बढ़ाता है। वो यह महिला की स्वतंत्रता या स्वाधीनता के विचार को प्रत्येक पुरुष और महिला व्यक्ति के एक

---

[19] शाहरज़ाद मोजाब, *'मार्क्सवाद और नारीवाद'* (2015) पृ.12

[20] लेनिन लिखते हैं – "इस बात को स्पष्ट रूप से कहना होगा कि सिवाय साम्यवाद के महिलाओं की मुक्ति संभव नहीं है। महिलाओं की मानवीय और सामाजिक स्थिति तथा उत्पादन के साधनों पर निजी मिल्कियत के बीच के अटूट संबंध को मजबूती से सामने लाना चाहिए। इससे हमारी नीति और नारीवाद के बीच एक स्पष्ट और अमिट अंतर रेखा खिच सकेगी। तथा इससे महिला प्रश्न को सामाजिक प्रश्न से , मजदूर वर्ग के प्रश्न से, जोड़ने का आधार प्राप्त होगा, जो इसे सर्वहारा के वर्ग संघर्ष और क्रांति के साथ मजबूती से जोड़ेगा। कम्युनिस्ट महिला आंदोलन अपने आप में एक जनआंदोलन होना चाहिए। इसे न सिर्फ सर्वहारा वर्ग का, बल्कि पूंजीवाद व सभी शासक वर्गों द्वारा हर उत्पीड़ित, शोषित व दमित तबके के व्यापक जनआंदोलन का एक हिस्सा होना चाहिए। इसमें सर्वहारा के वर्ग संघर्ष और एक कम्युनिस्ट समाज बनाने के उसके ऐतिहासिक मिशन में महिला आंदोलन का महत्व है। हमें इस पर गर्व करना चाहिए कि हमारी पार्टी में, व कम्युनिस्ट इंटरनेशनल में, क्रांतिकारी महिला तबके का उत्तम अंश है। लेकिन यही काफी नहीं है। हमें शहरों और गांवों की लाखों मेहनतकश महिलाओं को अपने संघर्षों और खासकर समाज के साम्यवादी पुनर्गठन के लिए अपनी तरफ लाना होगा। महिलाओं के बगैर कोई सच्चा जनआंदोलन हो ही नहीं सकता।" (क्लारा जेटकिन , 'महिला प्रश्न पर लेनिन', 1920)

[21] फुटनोट 26 व 29 में और अधिक चर्चा।

*पूरी तरह से* स्वतंत्र और मुक्त पहचान में परमाणुकरण के रूप में अवधारणा बना कर करता है। यह नारीवाद द्वारा लिंग संबंधों और पूंजीवाद को अलग करने और लिंग को पहचान और संस्कृति के प्रश्नों तक सीमित करने का स्वाभाविक परिणाम है (शाहरज़ाद मोजाब) जो यह महसूस नहीं करता कि महिलाओं की वास्तविक स्वतंत्रता पूंजीवाद और बुर्जुआ निजी संपत्ति के उन्मूलन और उत्पादन के सभी साधनों के पूर्ण रूप से समाजीकृत स्वामित्व के आधार पर समाज के पुनर्गठन में निहित है। मार्क्सवादियों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए और महिलाओं की स्वतंत्रता के इस नारीवादी चित्रण का शिकार नहीं बनना चाहिए। इसके नकारात्मक प्रभाव आज के बुर्जुआ एकल परिवार (न्यूक्लियर फैमिली) में अच्छी तरह से देखे जा सकते हैं जो बुर्जुआ समाज की आर्थिक इकाई के रूप में कार्य करता है और जो पुरुषों और महिलाओं दोनों के सभी प्रकार के अभाव, अलगाव, परमाणुकरण, और पृथक्करण की जगह है। यह निजी संपत्ति की अंतिम मंजिल है; यह वही है जिसकी निजी संपत्ति ऐतिहासिक रूप से और इस प्रकार *स्वाभाविक रूप से* आकांक्षा करती है; यह परिवार का वह रूप है जिसमें निजी संपत्ति ने अपने ऐतिहासिक मिशन और रूप को बुर्जुआ शासन के तहत पूरी तरह से साकार किया। इस मंजिल पर पहुंचने के बाद, समाज का हर सदस्य एक दूसरे से पूर्ण अलगाव और विच्छेद की भावना से ग्रस्त हो जाता है। कोई भी देख सकता है कि बुर्जुआ शासन के तहत यह भावना कितनी व्यापक है। बुर्जुआ निजी संपत्ति संबंधों के तहत केवल यही हो सकता था, और इस तरह यह निजी संपत्ति के संरक्षण में बुर्जुआ सामाजिक और उत्पादन संबंधों से उत्पन्न श्रमिकों के अलगाव की भावना का विस्तार के अलावा और कुछ नहीं है।

इसलिए पितृसत्ता के खिलाफ लड़ते हुए, महिलाओं की स्वतंत्रता और मुक्ति के लिए हमें, नारीवादियों के विपरीत, इस विघटन को आगे नहीं बढ़ाना चाहिए और इसका महिमामंडन नहीं करना चाहिए; इसके बजाय हमें समाजवाद-साम्यवाद के तहत समाज के एकीकरण के उच्च स्तर के विचार को आगे बढ़ाना चाहिए, जहाँ कोई भी व्यक्ति अलगाव और विच्छेद की भावना से कभी पीड़ित नहीं होगा। यही है जो मार्क्सवाद, नारीवाद के विपरीत, सामंती पितृसत्ता के खिलाफ लड़ते हुए, और स्पष्टता के लिए, किसी भी पितृसत्ता के खिलाफ लड़ते हुए, पूरी मानव जाति के लिए कल्पना करता है। हमें ध्यान देना चाहिए कि मार्क्स ने पूंजी के पहले खंड में क्या उल्लेख किया है। वह 'श्रम के संगठन में परिवर्तन' द्वारा 'रोजगार के अवसरों के एक व्यापक क्षेत्र' के खुलने के परिणामस्वरूप महिलाओं की 'अधिक आर्थिक स्वतंत्रता' के बारे में बात करते हैं, जिसमें 'दोनों लिंगों' को 'उनके सामाजिक संबंधों में एक साथ लाया गया है' और इस प्रकार 'घरेलू क्षेत्र के बाहर उत्पादन की सामाजिक रूप से संगठित प्रक्रियाओं में' महिलाओं का शामिल होना 'परिवार के एक **उच्च** रूप और लिंगों के बीच संबंधों के लिए एक **नई** आर्थिक नींव' के रूप में कार्य करेगा (बोल्ड जोड़ा गया)। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब यह है कि हम मार्क्सवादी कभी भी नारीवादी विचारधारा और व्यवहार के पदचिन्हों पर नहीं चल सकते और न ही हमें चलना चाहिए, जो लिंग की स्वतंत्रता और समानता के लिए लड़ते हुए परिवार और लिंगों के बीच संबंधों के विघटन और अलगाव का महिमामंडन करते हैं। हम जानते हैं कि नारीवाद महिलाओं के सवाल को जेंडर पहचान के सवाल में बदल देता है, मानो महिलाओं का दमन सिर्फ़ एक सांस्कृतिक घटना हो। हम इस जेंडर स्वतंत्रता संरचना और व्याख्या के साथ फासीवाद के खिलाफ नहीं लड़ सकते। यह मानवीय संबंधों के

मूल तत्व के भी खिलाफ जाता है जिसका मूल तत्व पुरुष-महिला संबंध है।[22] फासीवाद अपने नापाक नस्लवादी उद्देश्यों के लिए इसका सहारा लेता है और इस प्रक्रिया में पितृसत्ता को नस्लवादी पितृसत्ता में बदल देता है। फिर, बुर्जुआ व्यवस्था के तहत परिवार और लिगों के संबंधों के विघटन और उसके आर्थिक आधार के रूप में एकल परिवार की सबसे गंभीर समस्या का सामना करने वाली महिलाएं बड़ी संख्या में नस्लवादी पितृसत्तात्मक अपील को खुशी-खुशी स्वीकार कर सकती हैं, और बहुसंख्यक महिलाएं मानवीय संबंधों के मूल तत्व की रक्षा के लिए खुद को ही अपनी छोटी दुनिया में धकेलने के लिए तैयार हो सकती हैं। हमने इस आलेख के अंतिम भाग में इसके कुछ मुख्य पहलुओं पर चर्चा करने का प्रयास किया है।

हालांकि, यह वर्णन करना किसी भी तरह से कम महत्वपूर्ण और प्रासंगिक नहीं होगा कि युवा मार्क्स ने मध्ययुगीन सामंतवाद की समग्रता और अंतरंगता की तुलना में बुर्जुआ समाज के अलगाव और अहंकार के बारे में क्या और कैसे सोचा। मार्क्स ने अपने शुरुआती लेखन में, चाहे वह 'यहूदी प्रश्न पर' (1844) हो या 'हेगेल के अधिकार के दर्शन की आलोचना' (1843) हो, जिसमें उन्होंने मध्ययुगीनवाद को 'अस्वतंत्रता का जनतंत्र' कहा है, लगातार बुर्जुआ समाज के अलगाव और अहंकार को ध्यान में रखा है और मानव मुक्ति के उद्देश्य के अपने स्वयं के विवरण (जिससे वे जूझ रहे थे) को बेहतर ढंग से समझने के लिए मध्ययुगीन सामंतवाद की समग्रता और अंतरंगता के साथ इसकी तुलना की है।

> *"जबकि मार्क्स सामंती उदासीनता (nostalgia) को खारिज करते हैं और पूंजीवाद और उदार संवैधानिकता द्वारा लाई गई क्रांतिकारी प्रगति पर जोर देते हैं, फिर भी उनका मानना है कि मध्ययुगीनता में राजनीतिक और आर्थिक जीवन की आंशिक एकता का एक मॉडल है जिसे 'सच्चा लोकतंत्र' बहाल करेगा और उग्र बनाएगा।' ... सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के बीच एक अंतर को मजबूत करके, उदार राज्य एक तरह का सामाजिक सिज़ोफ्रेनिया उत्पन्न करता है, एक की व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सम्पूर्ण सामूहिक स्वतंत्रता के बीच संबंध के बारे में भ्रम पैदा करता है। जाहिर तौर पर स्वतंत्र नागरिक वास्तव में हॉब्सियन युद्ध की स्थिति में परमाणु योद्धा हैं। ... मार्क्स का दावा है कि केवल साम्यवाद ही निजी और सार्वजनिक, व्यक्तिगत और सामूहिक स्वतंत्रता का पूर्ण सामंजस्य प्रदान करेगा।"*[23]

यह याद रखना चाहिए कि पितृसत्ता को चुनौती देते हुए, खासकर महिलाओं पर बढ़ते फासीवादी हमलों के वर्तमान दौर में, अगर हम नारीवाद के पदचिन्हों पर चलते हैं, जो महिलाओं के सवाल को पहचान के सवाल में बदल देता है, तो यह पितृसत्ता को कायम रखने वाले शासक वर्गों को उखाड़ फेंकने के उद्देश्य से क्रांतिकारी आंदोलन की जीत और महिलाओं की मुक्ति के संघर्ष, दोनों के लिए विनाशकारी होगा। क्रांति की जीत और भी दूर हो जाएगी।

---

[22] पृष्ठ स. 32 में और अधिक चर्चा।

[23] दिमित्रिओस हालिकियास, '*द यंग मार्क्स ऑन फ्यूडलिज्म एज़ द डेमोक्रेसी ऑफ़ अनफ्रीडम*' (कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, नवंबर *2023)*

वैसे भी, सबसे बुरा समय अभी आना बाकी है क्योंकि फासीवाद - महिलाओं की मुक्ति का सबसे बड़ा दुश्मन - हर जगह सत्ता में आ रहा है। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि आज के फासीवादियों का महिला-विरोधी दमनकारी चरित्र पहले के समय की तुलना में कहीं अधिक गंभीर और खतरनाक है क्योंकि वे आज के पतनशील और परजीवी पूंजीवाद के सबसे खूंखार तत्वों के कहीं अधिक अमानवीय, सड़े हुए और प्रतिक्रियावादी प्रतिनिधि हैं। इसे और अधिक सरलता से कहें तो जहाँ तक महिलाओं के प्रति उनके रवैये का सवाल है, आज का फासीवाद 20वीं सदी के अपने समकक्षों की तुलना में कहीं अधिक विश्वासघाती, चालाक, गंदा और दुष्ट चरित्र वाला है। अगर यह अंतिम जीत हासिल कर लेता है, तो यह महिलाओं के जीवन को पूरी तरह से नरक बना देगा। यह पहले से ही समाज में मानवीय मूल्यों को बहुत तेजी से नष्ट कर रहा है। फासीवाद के बारे में सबसे विचलित करने वाली बात यह है कि यह अपने ही निर्माता यानी 21वीं सदी के क्षयग्रस्त पूंजीवाद की परजीवीता के कारण नैतिक पतन के गर्त (सबसे निचले बिंदु) पर सवार होकर सत्ता में आने और उसके बाद शासन करने की कोशिश करता है। यह सड़न को अपने राजनीतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल करता है और राज्य सत्ता पर अपनी पकड़ की मदद से इसे संस्थागत बनाता है। यह दर्शाता है कि अगर समाज को पूंजीवाद, जो इतना क्षयग्रस्त और परजीवी हो चुका है कि यह समाज के शरीर पर एक कैंसर की तरह लगता है जो धीरे-धीरे इसे खा रहा है, के चंगुल से मुक्त नहीं किया गया तो समाज का अंतिम भाग्य क्या होगा। यह निश्चित रूप से सच है कि हम एक ऐसे समाज में जी रहे हैं जो सांस्कृतिक और नैतिक रूप से बीमार हो गया है, और नैतिकता और सामाजिक क्षय के इस पूर्ण पतन के ऊपर सवार हो कर फासीवाद इसे अपनी तरह की पितृसत्ता के साए में और अधिक निगलने के लिए पूरी तरह तैयार है।[24]

---

[24] यह इस तथ्य (आर. जी. कर घटना के विरोध से संबंधित) से मेल खाता है कि ममता बनर्जी, जो राज्य की मुख्यमंत्री हैं, ने स्वयं प्रदर्शनकारियों को खुली धमकी दी, जबकि उनकी पार्टी के कार्यकर्ताओं (माफियाओं) ने महिला प्रदर्शनकारियों को उनके घरों के सामने 'मुंह काला करने' की धमकी दी। यह इस दौर में सभी शासक वर्गीय पार्टियों में सार्वजनिक नैतिकता और शर्म के पूर्ण विनाश को दर्शाता है, चाहे वह फासीवादी भाजपा हो या कोई अन्य पार्टी। सभी एक दूसरे के खिलाफ प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं। हमें याद रखना चाहिए कि हाल ही में भाजपा शासित मणिपुर में क्या हुआ था, जहां नस्लीय घृणा से भरी भीड़ ने पुलिस-प्रशासन की मौजूदगी में तीन महिलाओं को नंगा करके घंटों घुमाया, साथ ही उनमें से एक का यौन उत्पीड़न किया और उसके भाई को मार डाला। इसमें कारगिल युद्ध के एक सैनिक की पत्नी भी शामिल थी, जबकि वहां कई महिलाओं के साथ ऐसी घटनाएं हो चुकी हैं। मणिपुर की तत्कालीन महिला राज्यपाल के साथ ही भाजपा के विधायकों सांसदों ने भी इस पर चिता जताई और केंद्र से हस्तक्षेप करने के लिए बार-बार अनुरोध किया, लेकिन मोदी नहीं झुके और चीजों को खुलेआम होने दिया। ऐसी कोई रिपोर्ट नहीं है कि उन्होंने एक बार भी फोन करके सीएम को इसके लिए फटकार लगाई हो। आज भी, जब हम ये शब्द लिख रहे हैं, वहां भाजपा सरकार का राक्षसी राज जारी है। बलात्कार और हिसा के मामलों में कोई राहत नहीं है।

ऐसे उदाहरण भाजपा शासित राज्यों में खूब मिल सकते हैं जहां, यूपीए शासन में दिल्ली में हुई निर्भया और टीएमसी शासित बंगाल में अभया मामले के विपरीत, विरोध प्रदर्शन की भी अनुमति नहीं दी गई। आर . जी. कर मामले में भाजपा ने आंदोलन किया और खूब शोर मचाया, लेकिन हम जानते हैं कि जब ऐसी घटनाएं उनके शासित राज्यों में होती हैं, तो भाजपा सरकारें आंदोलन की भी अनुमति नहीं देती हैं। हमें कई घटनाओं को ध्यान में रखना चाहिए जहां भाजपा कार्यकर्ता खुद अपराधी रहे हैं या खुले तौर पर उनका समर्थन या बचाव किया है - उन्नाव (2017), कठुआ (2018), हाथरस (2020), महिला पहलवानों का विरोध (2023), बीएचयू (2023) ...

## पूंजीवाद को न उखाड़ फेंकने के लिए इतिहास का 'मृत्युदंड'

हां, हम इसे झेल रहे हैं। चलिए इसे स्पष्ट करते हैं। महिलाओं के लिए आज का दमनकारी माहौल किसी भी पिछले युग से कहीं अधिक घिनौना है। पूंजीवाद से पहले के समाजों में महिलाओं को पितृसत्तात्मक, सामंती और धार्मिक मूल्यों की मदद से दबाया जाता था, जबकि इस युग ने महिलाओं को एक 'स्वतंत्र' और बिकाऊ माल में बदल दिया है। कल तक घर की चारदीवारी में कैद रहने वाली महिलाएं आज और भी अधिक घिनौने सामाजिक माहौल में घिरी हुई हैं, क्योंकि उन्हें लगातार एकमात्र सेक्स-ऑब्जेक्ट, सेक्स-सिंबल या माल (कमोडिटी) में बदलने की कोशिश की जा रही है, जिसके लिए उन्हें तरह-तरह के अपमानजनक और भद्दी संज्ञाएं दिए जा रहे हैं। पूंजी ने आज महिलाओं को एक ऐसी वस्तु में बदल दिया है जिसका इस्तेमाल वो अपने मुनाफे की भूख को शांत करने के लिए कैसे भी कर सकता है। सबसे बड़ी साजिश यह है कि यह सब महिलाओं की तथाकथित स्वतंत्रता और आजादी के नाम पर किया जा रहा है।[25] पितृसत्ता के खिलाफ नारीवादी दृष्टिकोण का इसमें अपना योगदान है।

> *"नारीवादी सिद्धांत, आज अपनी सभी विविधताओं में, पूंजीवाद के निषेध के लिए प्रतिबद्ध नहीं है, और कुछ सिद्धांतकार लैंगिक संबंधों को एक व्यवस्था (पितृसत्ता) के रूप में नहीं देखते हैं, जबकि कुछ अन्य महिलाओं की मुक्ति के विचार को 'भव्य आख्यान' के रूप में अस्वीकार करते हैं। नारीवाद का लैंगिक संबंधों और पूंजीवाद को अलग करना और लिंग को संस्कृति के सवालों तक सीमित करना इससे भी अधिक न्यूनतावादी है। यह एक ऐसा नारीवाद है जो 20वीं सदी के महिला आंदोलनों के वैचारिक ढांचे को त्यागने में सांत्वना पाता है, जिसमें उत्पीड़न, शोषण, अधीनता, परतंत्रता, एकजुटता और अंतर्राष्ट्रीयता की अवधारणाएँ शामिल हैं, वो भी एक ऐसे समय में जब धार्मिक और बाज़ारवादी कट्टरपंथ दुनिया भर में 'महिलाओं पर युद्ध' में लगे हुए हैं।"*[26]

खास तौर पर भारत की बात करें तो यहां सामंती-पितृसत्तात्मक और साम्राज्यवादी संस्कृति व मूल्यों का विस्फोटक मिश्रण देखने को मिलता है, जो आजकल फासीवादियों के लिए बना-बनाया चारा बन गया है क्योंकि इसने अलगाव की भावना के साथ-साथ गहरा आध्यात्मिक संकट पैदा कर दिया है, जिससे मानसिक बीमारियां और अवसाद पैदा हो रहे हैं। यह स्थिति पितृसत्तात्मक फासीवादी विचारधारा के लिए बहुत काम की है। यह इसके तेजी से बढ़ने के लिए उपजाऊ जमीन है क्योंकि इसकी शिकारी प्रकृति श्रम और महिलाओं दोनों के खिलाफ काम करती है। श्रम के बाद इसने महिलाओं के शरीर को निशाना बनाया है। इसने महिलाओं के उत्पीड़न और उनके खिलाफ हिंसा में नए आयाम जोड़े हैं और आगे भी जोड़ते रहेंगे। इसके प्रभाव अब साफ तौर पर दिखने लगे हैं। आधुनिक पूंजी के सबसे घृणित हितों के

[25] महिलाओं को आज 'माल' के रूप में 'स्वतंत्र रूप से' और 'अपनी स्वतंत्रता (सहमति) के साथ' बाजार में लाया जा रहा है, ठीक वैसे ही जैसे समाज की एक बड़ी आबादी को हर दिन उजाड़कर 'अपनी स्वतंत्रता' के साथ श्रम बाजार में लाया जाता है। धन्नासेठ मालिक महिलाओं की 'स्वतंत्रता' के साथ वैसा ही धोखा कर रहे हैं जैसा वे एक मजदूर की 'स्वतंत्रता' के साथ करते हैं।

[26] शाहरज़ाद मोजाब, *मार्क्सवाद और नारीवाद*।

साथ महिला उत्पीड़न के पितृसत्तात्मक, धार्मिक और अन्य प्राक-पूंजीवादी तरीकों के गठजोड़ ने महिलाओं को आज पूंजी का एक अनूठा निशाना बना दिया है। आज का सड़ांध से भरा महिला-विरोधी माहौल इसी का नतीजा है। स्थिति इतनी भयावह है कि यह बाढ़ से ठीक पहले की स्थिति जैसी है, जब बांध में पानी का स्तर लाल निशान पर पहुंच जाता है। बलात्कार हर जगह हो रहे हैं - सड़कों पर, कार्यस्थल पर, यात्राओं में, स्कूलों और कॉलेजों में। आज बच्चे भी अपने घरों तक में सुरक्षित नहीं हैं। कोई भी जगह सुरक्षित नहीं रह गई है। कोई भी रिश्ता पवित्र नहीं रह गया है। नैतिकता जैसे शब्द आज बेमानी हो गए हैं।

आइए इस पतन को बढ़ावा देने में बाजार की भूमिका पर चर्चा करें। जैसा कि ऊपर कहा गया है, हम एक ऐसी पूंजीवादी सामाजिक व्यवस्था में रह रहे हैं जो पतन और परजीवीवाद को बढ़ावा देती है, जहाँ बाजार के माध्यम से महिलाओं को सेक्स ऑब्जेक्ट और माल में बदलने के लिए हर संभव प्रयास किया जा रहा है ताकि उनका मुनाफा बढ़े, और ये बदले में पुरुषों की यौन इच्छाओं को उत्तेजित कर रहा है। महिला-विरोधी पितृसत्तात्मक संस्कृति के सामान्य परिदृश्य में, पूंजीवादी बाजार की अत्यधिक व्यापक और बढ़ी हुई भूमिका ने पूरे परिदृश्य को मौलिक रूप से बदल दिया है। आइए इसे और करीब से देखें।

आज के समाज में हर चीज़ बाज़ार में खरीद-बिक्री के लिए उपलब्ध है। अगर हम बाजार के खेल के नियमों से वाकिफ हैं तो हमें पता होगा कि इजारेदार पूंजी बाज़ार को ऊपर से नीचे तक नियंत्रित करती है। इसके नियम सीधे बड़ी पूंजी, खास तौर पर इजारेदार वित्तीय पूंजी यानी इसके सबसे परजीवी घटक के नियंत्रण में हैं। इसकी संरचना और इसका पूरा खेल जिसके ज़रिए यह समाज को नियंत्रित करता है और इसकी छवि गढ़ता है, वह भी इसी इजारेदार पूंजी के नियंत्रण में है। यहाँ सवाल उठता है: क्या शिकारी बाज़ार स्त्री शरीर जैसी 'आकर्षक चीज़' और लिगों के बीच आकर्षण की भावना को 'रिश्ते के लिए' और 'सौंदर्य के लिए' ही रहने देगा? क्या ये बाज़ारी ताकतें, जो इंसानों की सूखी हड्डियाँ भी निचोड़कर मुनाफ़ा कमाती हैं, स्त्री शरीर और कामुकता का भी शोषण नहीं करेंगी? ये सीधे तौर पर तो मूल्य या अधिशेष मूल्य और पूंजी का निर्माण नहीं करती है, लेकिन इसका उपयोग वस्तुओं की बिक्री बढ़ाने में किया जा सकता है, जैसा कि हम अश्लील विज्ञापनों, पोर्न उद्योग तथा मनोरंजन उद्योग (फिल्में, सीरियल, संगीत वीडियो, रील आदि) में पैदा हो रहे राजस्व के माध्यम से देख रहे हैं, और इसलिए यह मूल्य प्राप्ति का एक साधन है।[27]

[27] इस समाज द्वारा हर उम्र के पुरुषों की बढ़ती यौन इच्छाओं को संतुष्ट करने के लिए किए गए उपाय और व्यवस्थाएं (विवाह और वेश्यावृत्ति) कम पड़ रही हैं। नतीजा हमारे सामने है। अनियंत्रित यौन इच्छाएं परिवार और रिश्तेदारों में बच्चों को भी अपना शिकार बना रही हैं। इसके अलावा, इस संबंध में बाजार द्वारा अपनाए गए तंत्रों का किशोरों के यौन मनोविज्ञान पर भी जबरदस्त प्रभाव पड़ना तय था। जब कोई किशोरी किसी आधुनिक माध्यम में दिखाए गए अत्यधिक कामुक और आकर्षक स्त्री शरीर को देखती है, तो स्वाभाविक रूप से उसके मन में भी वैसी ही कामुक मुद्राओं की इच्छा जागृत होती है। खुद को एक इंसान के बजाय सिर्फ एक शरीर के रूप में स्वीकार करने की उसकी यह पहली प्रवृत्ति और स्थिति पूरी तरह से 'स्वैच्छिक' लगती है, लेकिन इसकी पूरी पृष्ठभूमि पहले से मौजूद है, जो जबरन इस प्रवृत्ति को जन्म देती है। हालांकि, 'बाजार के अदृश्य हाथ' की तरह, बाहरी तौर पर यह पृष्ठभूमि भी अदृश्य ही रहती है। दूसरी ओर, उदाहरण के लिए, जिस तरह से एक किशोर इंटरनेट पर पोर्न फिल्म में एक महिला को देखता है, उसके दिमाग में महिला की पहली छवि

पोर्नोग्राफी पैसा कमाने का सीधा जरिया बन गई है। किसी भी तरह अमीर बनने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देने वाले आज के समाज में स्त्री कामुकता को पैसा कमाने का आसान और शर्तिया जरिया बनाया जा रहा है। इसे नैतिकता और अनैतिकता की बहस से परे का विषय बनाया जा रहा है। ***जिस पर बाजार मेहरबान हो, वह कोई भी चीज अनैतिक कैसे रह सकती है! वेश्यावृत्ति भी अब बहस से परे है!*** वेश्यावृत्ति जरूर चोरी-छिपे होती है, लेकिन नग्न शरीर के प्रदर्शन को पहले से ही खुली स्वीकृति मिल चुकी है। उत्पादक शक्तियों के विनाश और बढ़ती बेरोजगारी के माहौल में *स्त्री शरीर के नग्न प्रदर्शन* को महिलाओं के लिए एक बड़ा आकर्षक पेशा बनाया जा रहा है। ऐसा करके पूंजी के सभी उद्देश्य पूरे हो जाते हैं। वेश्यावृत्ति पर अनैतिकता का दाग अभी भी बना हुआ है, लेकिन जिस तरह से यह सार्वभौमिक होती जा रही है, उसके परिणाम स्पष्ट हैं।

इस तरह बाजार ने स्त्री देह और स्त्री कामुकता की मांग बढ़ा दी है। इसलिए इसकी आपूर्ति के लिए नए केंद्रों का उदय होना लाजिमी है। बाजार सिर्फ एक जगह नहीं है, यह एक पूरी प्रक्रिया का नाम है। मांग और आपूर्ति इसके केवल दो महत्वपूर्ण पात्र हैं। जब स्त्री देह इसमें शामिल हुई, तो स्वाभाविक रूप से पूंजीवाद-साम्राज्यवाद की जरूरतों के हिसाब से पितृसत्ता की छाया में मौजूदा समाज में इसे गौरवपूर्ण स्थान मिला। इसलिए यह बाजार का एक महत्वपूर्ण (गुप्त या खुला) हिस्सा बन गया है, जिसका 'मांग और आपूर्ति' का चक्र बखूबी काम कर रहा है, क्योंकि नैतिक पतन पहले ही चरम पर पहुंच चुका है। अब इसे प्रतिष्ठित बनाना भी जरूरी था। इसलिए इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए 'संस्थाएं' स्थापित की गईं। 'ग्लैमरस' दिखने के प्रशिक्षण केंद्र खोले गए और इसके गुणगान होने लगा। बड़ी पूंजी के केंद्रों के साथ इसके प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संबंध स्थापित किए गए।

**यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि पूंजीवाद ने हमें समाज के पूर्ण नैतिक और सांस्कृतिक विघटन की ओर अग्रसर किया है। फासीवाद पहले इसका लाभ उठाकर अपने उत्थान के लिए इसका इस्तेमाल करेगा। लेकिन अपने पूर्णतया महिला-विरोधी चरित्र और उनकी मुक्ति के विरोध के कारण वह अंततः इस स्थिति का इस्तेमाल महिलाओं को घरों की चारदीवारी के भीतर धकेलने और उन्हें दासता की स्थिति स्वीकार करने के लिए मजबूर करने के लिए करेगा।**

---

एक सेक्स ऑब्जेक्ट की होती है। एक किशोर का स्त्री से पहला रिश्ता माँ और बहन का होता है, लेकिन किशोरों की बढ़ती स्वाभाविक रुचियों की पूर्ति में इस रिश्ते की स्वाभाविक रूप से सीमाएँ होती हैं। बढ़ती उम्र की स्वाभाविक और जन्मजात माँगें (प्यार और स्ने ह आदि) समाज में स्त्री देह की माँग बढ़ाने वाले उपरोक्त उपायों और साधनों के आधिक्य में कहीं खो जाती हैं। अपनी माँ और बहन के अलावा, इन माध्यमों से वह अपने इर्द-गिर्द स्त्रियों का जो रूप सबसे अधिक देखता है, उससे उसके मन में स्त्रियों की एक बहुत ही एकतरफा छवि बनती है। एक साथी के रूप में स्त्री की कल्पना इस माहौल में अपवाद बन जाती है। एक सेक्स ऑब्जेक्ट के रूप में स्त्री की आधुनिक छवि और बाज़ार द्वारा 'पितृसत्तात्मक' पुरुष की बेलगाम यौन इच्छाओं का अतिशोषण कई आयामों के दुष्परिणाम पैदा कर रहा है। एक ओर बलात्कार और बाल यौन शोषण में वृद्धि हुई है, वहीं दूसरी ओर वीभत्स और क्रूर यौन हिसा में भी वृद्धि हुई है, जिसने पूरे समाज को, खासकर आज महिला समुदाय को सबसे अधिक आंदोलित किया है। सवाल यह है कि ऐसी अकल्पनीय बर्बरता में वृद्धि का स्रोत क्या है? हमने अपने पेपर में इस पर चर्चा की है।

संक्षेप में कहें तो सुसंस्कृत नामों के तहत कामुकता और नग्नता की प्रतियोगिताएं होने लगीं। समाज को पुराने जमाने के 'वेश्यालय' और 'हरम' से जुड़ी 'शर्म की भावना' से मुक्ति मिली। सेक्स बाजार को वैधानिक मान्यता मिलने लगी और यह स्वाभाविक और सामान्य लगने लगा। धीरे-धीरे यह आज आम बाजार का हिस्सा बन गया है। बाजार इससे भी आगे निकल गया। उसने घोषणा की: जब इंटरनेट पर चैटिंग संभव है, तो इस पर सेक्स क्यों नहीं हो सकता? 21वीं सदी में बाजार की यह घोषणा अब पोर्नोग्राफी और पोर्न बाजार के रूप में मूर्त रूप ले चुकी है।[28] और पूंजी व बाजार के स्वार्थों के मायाजाल में पड़ कर समाज जरा भी विचलित नहीं है। उसने इसे सहजता से स्वीकार किया है या नहीं, यह तो स्पष्ट नहीं है, लेकिन यह जरूर है कि वह इसे चुपचाप सहन कर रहा है। कहीं भी खुलकर विरोध नहीं हो रहा है। यहां तक कि **कोलकाता और दिल्ली में अभया और निर्भया बलात्कार कांड के खिलाफ हुए पितृसत्ता विरोधी मार्च में भी नहीं।** सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि महिला आबादी में जो हिस्सा बढ़ती बेरोजगारी, गरीबी और भुखमरी से सबसे ज्यादा पीड़ित है, वही भौतिक जीवन की मजबूरियों और आजीविका की विकट समस्या के कारण देह बाजार की ओर 'स्वाभाविक रूप से आकर्षित' हो रहा है और यह एक चलन (ट्रेंड) बन चुका है!

लेकिन यह मानवता का कैसा मज़ाक है! उत्पादन क्षमता के शिखर पर बैठा समाज, जो एक तरफ पूंजी और माल की आधिक्य से पीड़ित है, वहीं दूसरी तरफ पूंजीवादी उत्पादन संबंधों और उनके द्वारा लगाई गई सीमाओं के कारण भूख और गरीबी की उदासीन स्थिति में भी लड़खड़ा रहा है! इसे पलटना था ताकि क्षय को पूरे शरीर में फैलने से रोका जा सके। लेकिन यह अपने आप नहीं हो सकता था, और हमने इसे पलटा तो बिल्कुल नहीं। इसलिए क्षय फैल गया और गहरा हो गया, इस हद तक कि अब यह समाज को निगल रहा है। ऐसा लगता है कि मानवता 'इतिहास की सजा' - 'मृत्युदंड' की सजा - भुगत रही है क्योंकि इस सारे पतन और क्षय को बढ़ावा देने वाली ताकतों को उखाड़ फेंकने के फौरी और बेहद जरूरी काम को पूरा नहीं किया गया।

अब, लगता है कि महिला शरीर और कामुकता के संबंध में बाजार और पूंजी का मुख्य उद्देश्य आज पूर्ण रूप से पूरा हो चुका है, क्योंकि इसकी मांग अन्य वस्तुओं की मांग की तरह ही लगातार बढ़ रही है। यह पूंजीवाद के चरम क्षय के कारण पैदा हुई सड़न है जिसके परिणामस्वरूप बुर्जुआ समाज का पूर्ण विघटन हुआ है। इसका मुकाबला समाज के साम्यवादी और समाजवादी एकीकरण से किया जाना था। लेकिन हम इसमें असफल रहे और इसका नतीजा यह हुआ कि अब फासीवाद अपनी पितृसत्ता के आवरण में महिलाओं पर अनगिनत दुख और हमले करने के लिए इस सबका इस्तेमाल कर रहा है और इसे निर्देशित भी कर रहा है। फिर से, सभी प्रकार के नारीवादी सिद्धांतों ने इसमें अपनी-अपनी भूमिका निभाई है।[29]

---

[28] 'इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक हेल्थ' में 2014 में प्रकाशित एक अध्ययन से पता चलता है कि पोर्न देखने के मामले में भारत विश्व स्तर पर तीसरे स्थान पर है, जहां 12% वेबसाइट पोर्नोग्राफी को समर्पित हैं।

[29] यहां तक कि शाहरजाद मोजाब, जो नारीवाद की समर्थक हैं और मार्क्सवाद और नारीवाद के बीच 'विवाह' (एक संयुक्त सहयोग) की पक्षधर हैं, कहती हैं कि हालांकि *"नारीवाद ने 1980 के दशक के सैद्धांतिक उतार-चढ़ाव के बाद से लिंग संबंधों की हमारी समझ में*

# महिलाओं की अधीनता का संक्षिप्त इतिहास और महिला मुक्ति का रास्ता

महिलाओं की तथाकथित "हीनता" और पुरुषों से उनकी अधीनता न तो स्वाभाविक है और न ही शाश्वत। प्रारंभिक समाज में एक समय था, बर्बरता के मध्य चरण के अंत से ठीक पहले और खेती और पशुपालन[30] की शुरुआत से पहले, जब महिलाओं का घरेलू मामलों के साथ-साथ समाज में भी अग्रणी स्थान था। इस तरह से कि कोई भी श्रेष्ठ नहीं था यानी सामाजिक स्थिति में महिला और पुरुष समान थे। हालाँकि ऐसे साहित्य हैं जो कहते हैं कि महिलाओं का पुरुषों पर वर्चस्व भी था। हम अगस्त बेबेल की पुस्तक *महिला और समाजवाद (वूमन एंड सोशलिज्म)* में इसका कुछ विवरण पा सकते हैं।[31] ऐसे वर्णन भी यही बताते हैं कि महिलाएं अंततः पुरुषों के बराबर थीं, उनसे श्रेष्ठ नहीं। उनकी सर्वोच्चता का

---

*वास्तव में बहुत बड़ा योगदान दिया है, **लेकिन इसके द्वारा पूंजीवाद और पितृसत्ता को अलग कर के देखना एक राजनीतिक अंडरटेकिंग है जो ... इसका जुड़ाव उदारवाद और अधिकतम जनतांत्रिक सिद्धांत व बाजार के साथ उनके संबंधों से सुनिश्चित करता है।"*** यह स्वाभाविक है क्योंकि अगर नारीवादी सिद्धांत पूंजीवादी व्यवस्था और पितृसत्ता को उखाड़ फेंकने के खिलाफ है, तो उसे इसके साथ मिलीभगत करनी होगी और बाजार सहित हर संभव तरीके से अपने मिशन को आगे बढ़ाना होगा। नारीवादी सिद्धांत के लिए अंतिम महिला मुक्ति का मुद्दा एक दिखावा है। यह महिलाओं के मुद्दे को केवल लिंग पहचान और सांस्कृतिक मुद्दे के रूप में देखता है। इसलिए इसे बाजार के साथ एक मधुर संबंध बनाए रखना होगा और उसके उद्देश्यों को आगे बढ़ाना होगा, भले ही वह महिलाओं के खिलाफ हो। **और यह ऐसे समय में हो रहा है जब धार्मिक और बाजारवादी कट्टरपंथ दुनिया भर में 'महिलाओं के खिलाफ युद्ध' में लगे हुए हैं** , जैसा कि *शाहरजाद मोजाब* ने सही दावा किया है।

[30] इस प्रारंभिक समाज पर पूर्ण प्रकाश डालने के लिए हम *एफ. एंगेल्स* की पुस्तक '*परिवार, निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति*' के अलावा *ऑगस्ट बेबेल* की पुस्तक '*वीमेन एंड सोशलिज्म*' का भी संदर्भ लेना चाहेंगे।

[31] ***"कभी-कभी कबीलों (जेन्स) में महिलाएं कठोरता से शासन करती थीं, और उस पुरुष के लिए मुश्किल स्थिति थी जो आम जीविका में अपना हिस्सा देने के लिए बहुत आलसी या बहुत अनाड़ी था। उसे बाहर निकाल दिया जाता था और वह अपने ही कबीले में वापस जाने के लिए मजबूर हो जाता था, जहाँ उसे स्वागत मिलने या स्वीकार किए जाने की संभावना नहीं थी, या किसी अन्य कबीले में प्रवेश पाने के लिए मजबूर हो जाता था जहाँ उसे कम कठोरता से आंका जाता हो।*** *लिविंगस्टोन ने अपनी पुस्तक "मिशनरी ट्रैवल्स एंड रिसर्च इन साउथर्न अफ्रीका" में वर्णित किया है कि मध्य अफ्रीका के मूल निवासियों द्वारा विवाह के इस रूप को आज भी बनाए रखा गया है। ज़ाम्बेसी में उनका सामना बलौंडा से हुआ, जो एक मजबूत और सुंदर नीग्रो जनजाति थी, जो कृषि कार्यों में लगी हुई थी, और जल्द ही पुर्तगालियों द्वारा उनको दी गई रिपोर्ट की पुष्टि हो गयी, जिस पर उन्होंने पहले विश्वास करने से इनकार कर दिया था, कि महिलाओं का उनके बीच एक श्रेष्ठ स्थान था। वे आदिवासी परिषद की सदस्य थीं।* ***जब एक युवा पुरुष विवाह करता है, तो उसे अपने गाँव से उस गाँव में जाना होता है जहाँ उसकी पत्नी रहती है। साथ ही उसे जीवन भर आग जलाने के लिए अपनी सास को लकड़ी उपलब्ध कराने का वचन देना होता है। बदले में, महिला को अपने पति को भोजन उपलब्ध कराना होता है। हालाँकि कभी-कभी पति और पत्नी के बीच छोटे-मोटे झगड़े होते थे, लेकिन लिविंगस्टोन ने पाया कि पुरुष महिला वर्चस्व के खिलाफ़ विद्रोह नहीं करते थे। लेकिन दूसरी ओर, उन्होंने पाया कि जब पुरुष अपनी पत्नियों का अपमान करते थे, तो उन्हें उनके पेट के जरिये कड़ी सज़ा दी जाती थी। लिविंगस्टोन ने बताया कि पुरुष खाने के लिए घर आता है, लेकिन उसे एक महिला से दूसरी महिला के पास भेजा जाता है और उसे कुछ भी नहीं दिया जाता। थका हुआ और भूखा, वह आखिरकार गाँव के सबसे घनी आबादी वाले हिस्से में एक पेड़ पर चढ़ जाता है और दुःख भरी आवाज़ में चिल्लाता है: "सुनो, सुनो! मैंने सोचा था कि मैंने महिलाओं से शादी की है, लेकिन वे चुड़ैल हैं! मैं कुंवारा हूँ; मेरी एक भी पत्नी नहीं है! क्या यह मेरे जैसे नवाब के लिए न्यायपूर्ण और उचित है?!"***

मतलब केवल यही था कि वे आदिम समाज में व्यवस्था बनाए रखने के लिए जिम्मेदार थीं। कुछ लेखकों ने उन्हें पुरुषों के बराबर या उनसे भी ज़्यादा शारीरिक शक्ति रखने वाला भी बताया है।[32] हालाँकि, मुख्य प्रश्न है: इसमें बदलाव कब और कैसे आया? इसका उत्तर फ्रेडरिक एंगेल्स ने अपनी महान कृति *परिवार, निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति* (1884) के माध्यम से दिया।

उन्होंने दिखाया कि उत्पादन के तरीके में बदलाव ने पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता के उपरोक्त संबंध को निर्भरता और गुलामी या हीनता में बदल दिया। पहले, आदिम कृषि के तहत, महिलाएँ बगीचों और घरेलू कामों की देखभाल करती थीं जो तत्कालीन सामाजिक-सामुदायिक जीवन और उसके उत्पादन और प्रजनन का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा थे, जबकि पुरुष जीवन की दैनिक आवश्यकताओं को प्राप्त करने के लिए काम के एक हिस्से के रूप में शिकार पर जाते थे जो द्वितीयक भूमिका निभाते थे। इस अवधि के दौरान सामाजिक जीवन पूरी तरह से सामुदायिक था, जो कबीलों या *गोत्र* (जेन्स) द्वारा व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से या व्यक्तियों के किसी भी समूह द्वारा एकत्र, प्राप्त या उत्पादित की गई चीज़ों पर सामूहिक स्वामित्व पर आधारित था। सब कुछ कबीलों के सामान्य स्वामित्व का था जबकि जीवन का प्रजनन सामूहिक विवाह के माध्यम से होता था, जिसमें वंश को महिला वंश के माध्यम से माना जाता था;

[32] बेबेल लिखते हैं कि आम तौर पर "*मातृ कानून के तहत, तुलनात्मक रूप से शांतिपूर्ण परिस्थितियाँ बनी रहती थीं। सामाजिक संबंध सरल थे और जीवन का तरीका आदिम था। विभिन्न कबीले एक-दूसरे से अलग रहते थे और एक-दूसरे के क्षेत्र का सम्मान करते थे। यदि एक जनजाति पर दूसरे द्वारा हमला किया जाता था, तो पुरुष रक्षा के लिए हथियार उठाते थे और* ***महिलाओं द्वारा उनका बखूबी समर्थन किया जाता था****... कुल मिलाकर, आदिम दिनों में पुरुष और महिला के बीच शारीरिक और मानसिक अंतर लगभग उतना बड़ा नहीं था जितना कि वर्तमान में हैं... कोलंबस पर सांता क्रूज़ के पास एक छोटे से स्लूप में इंडियन्स की एक टुकड़ी ने हमला किया था जिसमें* ***महिलाएँ पुरुषों की तरह ही बहादुरी से लड़ी थीं।*** *इस अवधारणा की पुष्टि हैवलॉक एलिस ने भी की है: "श्री एच. एच. जॉनस्टोन के अनुसार, कांगो के एंडोम्बियों में महिलाएँ, बोझा ढोने और आम तौर पर मजदूरों के रूप में बहुत मेहनत करने के बावजूद, पूरी तरह से खुशहाल जीवन जीती हैं; वे अक्सर पुरुषों की तुलना में अधिक मजबूत और अधिक विकसित होती हैं, उनमें से कुछ, उन्होंने हमें बताया, वास्तव में शानदार काया रखती हैं... वे पुरुषों के समान भारी वजन उठाती हैं और इसे काफी अच्छे से करती हैं। उत्तरी अमेरिका में फिर से एक इंडियन सरदार ने हर्न से कहा: महिलाओं को श्रम के लिए बनाया गया है; एक महिला उतना ही भार उठा सकती है या खींच सकती है जितना दो पुरुष उठा सकते हैं। शेलॉन्ग, जिन्होंने न्यू गिनी के जर्मन संरक्षित क्षेत्र में पापुआंस का मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से सावधानीपूर्वक अध्ययन किया है, का मानना है कि महिलाएँ पुरुषों की तुलना में अधिक मजबूत होती हैं। मध्य ऑस्ट्रेलिया में फिर से, पुरुष कभी-कभी ईर्ष्या के कारण महिलाओं को पीटते हैं, लेकिन ऐसे अवसरों पर महिला द्वारा अकेले ही पुरुष को बुरी तरह पीटना कोई असामान्य बात नहीं है। क्यूबा में, महिलाओं ने पुरुषों के साथ मिलकर लड़ाई लड़ी और भरपूर स्वतंत्रता का आनंद लिया। भारत की कुछ जातियों, उत्तरी अमेरिका के पुएब्लोस, पैटागोनियन में महिलाएँ पुरुषों जितनी ही बड़ी हैं। इसी तरह, अफ़गानों में, जिनके साथ कुछ जनजातियों में महिलाओं को काफी हद तक शक्ति प्राप्त है। यहाँ तक कि अरबों और ड्रूस में भी यह देखा गया है कि महिलाएँ पुरुषों जितनी ही बड़ी हैं। और रूसियों में दोनों लिंग अंग्रेज़ों या फ्रांसीसी लोगों की तुलना में ज़्यादा समान हैं।"*

बच्चा माँ के वंश का होता था न कि पिता के।[33] इसने महिलाओं को समाज के साथ-साथ घरों में भी अग्रणी स्थान पर पहुँचा दिया। निजी संपत्ति अभी तक परिदृश्य में नहीं आई थी।

हालांकि, पशुधन प्रजनन या पशुपालन की अवधि के आगमन के साथ, सामाजिक जीवन और उत्पादन का एक नया तरीका आकार लेने लगा, जिसकी शाखाएँ मवेशी पालन से लेकर घरेलू हस्तशिल्प तक फैलीं, जिसने कृषि का विस्तार या विकास करने में मदद की। इसने अंततः सामाजिक जीवन और उत्पादन के पिछले तरीके को बदल दिया, जिसका आधार अब निजी संपत्ति थी, जो पहले रेवड़ और गल्ले (herds) के रूप में और उसके बाद अन्य धन जो इससे प्राप्त होते थे उसके रूप में, इन झुंडों के बदले में प्राप्त वस्तुएं और दास सहित, जो पुरुषों के कब्जे या स्वामित्व में आ गई थी। इसने एक दरार पैदा की और मातृ अधिकार के नेतृत्व वाली पुरानी गोत्र संरचना में व्यवधान पैदा किया क्योंकि पुरुष वर्ग इस बात पर अड़ा हुआ था कि उनकी निजी संपत्ति उनके बेटों को विरासत में मिले। यह वंश को पुरुष वंश के माध्यम से निर्धारित करने की लड़ाई थी न कि महिला वंश के माध्यम से यानी, पुरुषों के वर्ग ने मातृ-अधिकार को उखाड़ फेंकने के लिए एक युद्ध शुरू कर दिया।

एक तरफ जहां मातृ-अधिकार को उखाड़ फेंकने के लिए पुरुषों द्वारा यह लड़ाई एक मोड से दूसरे मोड में संक्रमण काल के साथ-साथ चल रही थी, सामाजिक जीवन का नया मोड, जब यह पूरी तरह से विकसित हो गया, तो इसने आखिरकार श्रम के पहले महान सामाजिक विभाजन को जन्म दिया जिससे दास प्रथा स्थापित हुई। और श्रम के इस सामाजिक विभाजन से समाज पहली बार दो वर्गों में विभाजित हुआ: स्वामी और दास। एंगेल्स लिखते हैं,

> *"जब पशुपालन, खेती, घरेलू दस्तकारी - सभी शाखाओं में उत्पादन का विकास हुआ तो मानव श्रमशक्ति जितना उसके पोषण में खर्च होता था, उससे अधिक पैदा करने लगी। साथ ही गोत्र के, या सामुदायिक कुटुंब के, अथवा अलग-अलग परिवारों के प्रत्येक सदस्य के जिम्मे रोजाना पहले से कही ज्यादा काम आ पड़ा। इसलिए जरूरत महसूस हुई कि कहीं से और श्रमशक्ति लाई जाए। वह युद्ध से मिली। युद्ध में जो लोग बंदी हो जाते थे, अब उनको दास बनाया जाने लगा। उस समय की सामान्य ऐतिहासिक परिस्थितियों में जो पहला बड़ा सामाजिक श्रम विभाजन हुआ, वह श्रम की उत्पादन-क्षमता को बढ़ाकर, अर्थात धन में वृद्धि करके और उत्पादन के क्षेत्र को विस्तार देकर समाज में अपने पीछे लाजिमी तौर पर दास प्रथा को ले आया। पहले बड़े सामाजिक श्रम विभाजन के परिणामस्वरूप खुद समाज के पहले बड़े विभाजन का उदय हुआ। समाज दो वर्गों में बंट गया : एक ओर दासों के मालिक हो गए और दूसरी ओर दास, एक ओर शोषक हो गए और दूसरी और शोषित।"*

[33] इसे मातृ-अधिकार कहा जाता था। सामाजिक संगठन का आदिम रूप जेन्स (बहुवचन 'जेंटेस') था और प्रत्येक कबीले में जेंटेस होते थे। एक ही माँ के वंशज एक ही जेन्स के थे। प्रत्येक जनजाति में कई जेंटेस होते थे, जिनमें वंश का निर्धारण महिला वंश से होता था, न कि पुरुष वंश से।

स्वाभाविक रूप से, कोई भी उस संक्रमण चरण या अवधि की कल्पना कर सकता है जो पिछली विधा (जिसमें महिलाओं ने अग्रणी और प्रमुख भूमिका निभाई थी) और इस नई विधा (जिसमें पुरुषों ने वह भूमिका निभाई थी) के बीच मौजूद थी। इस संक्रमणकालीन अवधि में, पुरुष ने पहले घर के बाहर और बाद में घर के अंदर अग्रणी और प्रमुख भूमिका निभानी शुरू की, केवल तब जब मातृ-अधिकार पूरी तरह से पराजित हो चुका था। **इसलिए यह कहा जा सकता है कि दास वर्ग के स्वामी वर्ग द्वारा उत्पीड़न के रूप में जो पहला वर्ग उत्पीड़न उत्पन्न हुआ, उसके पहले या कम से कम उसके साथ, महिला लिंग के पूरे वर्ग का पुरुष द्वारा उत्पीड़न स्थापित था।**

एंगेल्स ने इस संक्रमण काल को इन शब्दों में व्यक्त किया है –

> *"जानवरों के रेवड़ और गल्ले कब और कैसे कबीले अथवा गोत्र की सामूहिक संपत्ति से अलग-अलग परिवारों के मुखियाओं की संपत्ति बन गए, यह हम आज तक नहीं जान सके हैं। परंतु मुख्यतः यह परिवर्तन इसी अवस्था में हुआ होगा। जानवरों के रेवड़ों तथा अन्य संपदाओं के कारण परिवार के अंदर क्रांति हो गई। जीविका कमाना सदा पुरुष का काम रहा था, वह जीविका कमाने के साधनों का उत्पादन करता था और उनका स्वामी होता था। अब जानवरों के रेवड़ जीविका कमाने का नया साधन बन गए थे; शुरू में जंगली जानवरों को पकड़कर पालतू बनाना और फिर उनका पालन-पोषण करना - यह पुरुष का ही काम था। इसलिए वह जानवरों का मालिक होता था और उनके बदले में मिलने वाले तरह-तरह के माल और दासों का भी मालिक होता था। इसलिए उत्पादन से जो अतिरिक्त पैदावार होती थी, वह पुरुष की संपत्ति होती थी; नारी उसके उपभोग में हिस्सा बंटाती थी, परंतु उसके स्वामित्व में नारी का कोई भाग नहीं होता था।"*

एंगेल्स आगे लिखते हैं -

> *""जांगल" योद्धा और शिकारी घर में नारी को प्रमुख स्थान देकर खुद गौण स्थान से ही संतुष्ट था [सामाजिक जीवन और उत्पादन की पिछली विधा में - लेखक का नोट]। "सीधे-सादे" गड़रिये [सामाजिक जीवन और उत्पादन की नई विधा में पशुपालक, जिसमें पशुओं के झुंड मनुष्य के अधिकार में आ गए - लेखक का नोट] ने अपनी दौलत के जोर से मुख्य स्थान पर खुद अधिकार कर लिया और नारी को गौण स्थान में धकेल दिया। नारी कोई शिकायत न कर सकती थी। पति और पत्नी के बीच संपत्ति का विभाजन परिवार के अंदर श्रम विभाजन द्वारा नियमित होता था। श्रम विभाजन पहले जैसा ही था, फिर भी अब उसने घर के अंदर के संबंध को एकदम उलट-पलट दिया था, क्योंकि परिवार के बाहर श्रम विभाजन बदल गया था। जिस कारण से पहले घर में नारी सर्वेसर्वा थी - यानी उसका घरेलू कामकाज तक ही सीमित रहना - उसी ने अब घर में पुरुष का आधिपत्य सुनिश्चित बना दिया। जीविका कमाने के पुरुष के काम की तुलना में नारी के घरेलू काम का महत्व जाता रहा [या उतना महत्वपूर्ण नहीं रह गया था - लेखक का नोट]। अब पुरुष का काम सब कुछ बन गया और नारी का काम एक महत्वहीन योगदान मात्र रह गया।"*

इसके ठीक बाद एंगेल्स जो लिखते हैं, वह स्त्री की गुलामी और पुरुष द्वारा उसकी पराधीनता से मुक्ति के लिए सबसे महत्वपूर्ण है। वे लिखते हैं -

*"यहां हम अभी से ही यह बात साफ़-साफ़ देख सकते हैं कि जब तक स्त्रियों को सामाजिक उत्पादन के काम से अलग और केवल घर के कामों तक ही, जो निजी काम होते हैं, सीमित रखा जाएगा, तब तक स्त्रियों का स्वतंत्रता प्राप्त करना और पुरुषों के साथ बराबरी का हक पाना असंभव है और असंभव ही बना रहेगा। स्त्रियों की स्वतंत्रता केवल उसी समय संभव होती है जब वे बड़े पैमाने पर, सामाजिक पैमाने पर, उत्पादन में भाग लेने में समर्थ हो पाती हैं, और जब घरेलू काम उनके न्यूनतम ध्यान का तकाज़ा करते हैं। और यह केवल बड़े पैमाने के आधुनिक उद्योग के परिणामस्वरुप ही संभव हुआ है, जो न केवल स्त्रियों के लिए यह मुमकिन बना देता है कि वे बड़ी संख्या में उत्पादन में भाग ले सकें[34], बल्कि जिसके लिए स्त्रियों को उत्पादन में खींचना भी जरूरी होता है, और इसके अलावा जिसमें घर के निजी कामकाज को भी एक सार्वजनिक उद्योग बना देने की प्रवृत्ति होती है।"[35]*

सामंतवाद के तहत बाद के दिनों के निरंकुश शासन का उदय, मातृ-अधिकार की पूर्ण पराजय और उसे उखाड़ फेंकने के स्वाभाविक परिणाम के रूप में, पितृ-अधिकार की सर्वोच्च सत्ता के तौर पर स्थापित होने की निरंतर और विजयी प्रक्रिया थी। एंगेल्स के ये शब्द सामंतवाद के तहत बाद के दिनों के निरंकुश शासन की गहरी पितृसत्तात्मक प्रकृति को प्रकट करते हैं -

*"जब घर के अंदर पुरुष की सचमुच प्रभुता कायम हो गई, तो उसकी तानाशाही कायम होने के रास्ते में जो आखिरी बाधा थी, वह भी खत्म हो गई। मातृसत्ता के नाश, पितृसत्ता की स्थापना और युग्म-परिवार के धीरे-धीरे एकनिष्ठ विवाह की प्रथा में संक्रमण से इस तानाशाही की परिपुष्टि हुई और वह स्थाई बनी। इससे पुरानी गोत्र-व्यवस्था में दरार पड़ गई। एकनिष्ठ परिवार एक ताकत बन गया और गोत्र के अस्तित्व के लिए एक खतरा बन गया।"[36]*

---

[34] जिसका आधार तकनीकी क्रांति है जो पूंजीवाद के तहत लगातार बढ़ रही है (हालांकि अब इसमें रुकावटें, गंभीर अवरोध, यहां तक कि पूंजीवाद के अपने अंतहीन संकट के कारण पश्चगमन की स्थिति तक देखी जा सकती है) और जो समाजवाद के तहत और अधिक तीव्रता से निर्बाध आगे बढ़ेगी।

[35] बेशक आधुनिक पूंजीवाद ने ऐसा किया है, लेकिन वर्तमान पूंजीवादी सामाजिक संबंधों के तहत अनुमत सीमा तक ही , जो केवल एक छोटे से तबके को इस उद्योग से लाभ पहुँचाता है। यह महिलाओं की पूरी आबादी के लिए केवल समाजवाद के द्वारा और उसके तहत ही किया जा सकता है, जो सभी को लाभ पहुँचाने के लिए सबसे बड़े पैमाने पर फैक्ट्री रसोई स्थापित करेगा, और पूंजीवादी सामाजिक संबंधों द्वारा लगाए गए अवरोधों को तोड़ देगा।

[36] यह वाक्य “इससे पुरानी गोत्र-व्यवस्था में दरार पड़ गई। एकनिष्ठ परिवार एक ताकत बन गया और गोत्र के अस्तित्व के लिए एक खतरा बन गया।” यह समझने के लिए काफी महत्वपूर्ण है कि कैसे निजी संपत्ति आधारित पितृ-अधिकार और एकनिष्ठता ने एकल

अतः पितृसत्ता पर आधारित एकनिष्ठ वैयक्तिक पारिवारिक संरचना, जिसमें वंश पुरुष के माध्यम से निर्धारित होता है, न कि महिला वंश के माध्यम से, न तो शाश्वत है और न ही प्राकृतिक। यह बहुत बाद में अस्तित्व में आई, यहाँ तक कि एंगेल्स के अनुसार, "यूथ-विवाह" (समूह विवाह) और "युगल विवाह" (जिसमें एक पति की एक पत्नी होती है और इसके विपरीत) से भी बाद में, जिसमें वंश अभी भी महिला वंश से ही माना जाता था, यानी नवजात शिशु माँ के वंश से संबंधित होता था, न कि पिता के वंश से। वास्तव में, एकनिष्ठ विवाह (monogamy) का आगमन महिला वंश, यानी मातृ-अधिकार के माध्यम से पुरानी वंश परंपरा, के विध्वंस के साथ ही देखा जाना चाहिए। यह उत्पादन की सामाजिक स्थितियों के विकास के दौरान अस्तित्व में आई, अधिक सटीक रूप से कहें तो निजी संपत्ति के आगमन के साथ अस्तित्व में आई जिसने महिलाओं को पुरुषों के अधीन करने में सफलता प्राप्त की। निजी पूंजी के आगमन ने ही सामाजिक स्थितियों को इस जगह पहुंचाया जहां पुरुषों द्वारा महिलाओं और मातृ-अधिकार की विश्व ऐतिहासिक हार हुई।

एंगेल्स के अनुसार, *"अब घर के अंदर भी पुरुष ने अपना आधिपत्य जमा लिया। नारी पदच्युत कर दी गई। वह जकड़ दी गई।"* यहां, दो मोर्चों पर भ्रम को दूर करना आवश्यक है। सबसे पहले, जब सतही तौर पर देखा जाता है, तो ऐसा लगता है कि अंतर्विरोध पुरुषों बनाम महिलाओं के बीच है। जबकि सार रूप में, यह वास्तव में महिला बनाम निजी संपत्ति है। यह अतीत की तुलना में, जब नई उभरी निजी संपत्ति (कम से कम रेवड़/झुंड के रूप में अपने प्राथमिक रूप में) पुरुषों के पूरे वर्ग की थी, अब और अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। दूसरा, उसके ठीक बाद, जैसा कि एंगेल्स ने कहा, *"इससे पुरानी गोत्र-व्यवस्था में दरार पड़ गई। एकनिष्ठ परिवार एक ताकत बन गया और गोत्र के अस्तित्व के लिए एक खतरा बन गया।"* गोत्र (जेन्स) के लिए इस खतरे का मतलब है कि निजी संपत्ति भी जेन्स या पूरे कबीले यानी, **सभी** पुरुषों की संपत्ति नहीं रही। इसलिए सामाजिक उत्पादन की स्थितियों के विकास के दौरान निजी संपत्ति के विकास के कारण महिलाओं का पुरुषों के अधीन होना, बाद में पुरुष द्वारा पुरुष (स्वामी और दास, या जैसा कि आज है, पूंजीपति और श्रमिक) के शोषण का कारण भी बना, और इसी तर्क से, अब समय आ गया है जब सामाजिक उत्पादन की सामाजिक स्थितियों का आगे का विकास (निजी संपत्ति के उन्मूलन की ओर) पुरुषों और महिलाओं को आज के पूंजीवाद-साम्राज्यवाद से समाजवाद (साम्यवाद का पहला चरण) और फिर साम्यवाद के उच्चतम चरण में एकजुट करेगा, और इस हार को उलट देगा। हम जानते हैं, यह दिखाते हुए कि कैसे इस "महिला लिग की हार" से एकनिष्ठ परिवार विकसित हुआ, जिसमें एक लिग द्वारा दूसरे लिग की अधीनता सन्निहित थी, एंगेल्स उसी समय यह भी दिखाते हैं कि कैसे समाजवाद के संघर्ष में और समाजवाद के निर्माण में महिलाओं और पुरुषों के बीच असमान संबंध के बदले में एक नई समानता को जगह मिलेगी।[37]

---

परिवार की शक्ति पर आधारित राजशाही के युग के साथ-साथ निरंकुश राजाओं के उदय को जन्म दिया, जिसने सामूहिक स्वामित्व और यहां तक कि जनजातियों के आदिम सामाजिक संगठन की गोत्र संरचना में सन्निहित इसकी भावना को भी पूरी तरह से नकार दिया।

[37] *'महिलाएँ और साम्यवाद'* का परिचय देखें।

संक्षेप में कहें तो निजी संपत्ति के उदय के बाद उभरे हर वर्ग-विभाजित समाज में महिलाओं का उत्पीड़न एक आम बात रही है। इसके पहले धरती पर महिलाओं का उत्पीड़न और गुलामी नहीं थी। निजी संपत्ति के उदय से पहले के सभी युगों में महिलाओं को पुरुषों के समान ही सम्मान और समाज में समान दर्जा प्राप्त था। महिलाएं पुरुषों के बराबर थीं।[38] संभवतः बर्बर युग के अंत में निजी संपत्ति का उदय हुआ और इसके साथ ही महिलाएं पुरुषों की संपत्ति बन गईं। वे मुख्य रूप से "निजी संपत्ति के उत्तराधिकारियों" को पैदा करने और उनका पालन-पोषण करने की मशीन में बदल दी गईं। इस तरह एक पितृसत्तात्मक समाज अस्तित्व में आया, जो आज भी पूंजीवाद के तहत न केवल अधिरचना में बल्कि उसके आधार में भी मौजूद है।[39]

[38] यह भी ध्यान में रखना चाहिए ताकि यहां कोई नई गलतफहमी पैदा न हो, कि ऐसा नहीं है कि मातृसत्ता के दौर में या मातृ -अधिकार के समय महिलाएं घर का काम नहीं करती थीं। फर्क उसके सामाजिक और निजी चरित्र में है। उन दिनों पुराने सामुदायिक परिवार (जिसमें कई जोड़े और उनके बच्चे होते थे) में महिलाओं द्वारा किया जाने वाला घर का काम और साधारण खेती (बागवानी) का काम उतना ही महत्वपूर्ण, सार्वजनिक और सामाजिक रूप से जरूरी था जितना कि पुरुषों द्वारा भोजन जुटाने का काम। पितृसत्तात्मक परिवार की स्थापना के साथ और खासकर एकनिष्ठ व्यक्तिगत परिवार (आधुनिक व्यक्तिगत परिवार) की स्थापना के बाद घरेलू काम का सामाजिक चरित्र जितनी तेजी से गायब हो सकता था, हो गया। अब यह समाज के लिए चिता का विषय नहीं रहा। महिलाओं को सामाजिक उत्पादन के क्षेत्र से बाहर कर दिए जाने और घर में दासी बना दिए जाने के बाद से यह पत्नियों का निजी और एक कमरतोड़ काम (drudgery) बन गया है।

[39] आइए हम बताते हैं कि पूंजीवादी उत्पादन पद्धति में पितृसत्ता कैसे काम करती है और अपनी जीवंतता कैसे पाती है। इतिहास की भौतिकवादी अवधारणा के अनुसार, 'इतिहास में निर्णायक तत्व अंततः तात्कालिक जीवन का उत्पादन और पुनरुत्पादन है। लेकिन यह स्वयं दो प्रकार के होते हैं। एक ओर, जीविका के साधनों - भोजन, वस्त्र और आवास - और इन चीजों के लिए आवश्यक औजार का उत्पादन होता है, और दूसरी ओर, स्वयं मनुष्यों का उत्पादन, यानी प्रजातियों का प्रसार होता है।' (मार्क्स) पूंजीवाद के तहत मजदूर वर्ग और सर्वहारा वर्ग के संबंध में, यह श्रम-शक्ति के उत्पादन और पुनरुत्पादन का रूप ले लेता है। इस प्रकार संपूर्ण माल उत्पादन अंततः उस माल के लिए परिवार पर निर्भर होता है जिस पर पूरा पूंजीवादी समाज निर्भर करता है, यानी श्रम शक्ति। श्रम शक्ति का मूल्य श्रम शक्ति के संपूर्ण उत्पादन और पुनरुत्पादन के लिए आवश्यक सामाजिक श्रम की मात्रा से निर्धारित होता है। संक्षेप में, एक इकाई के रूप में पूरे परिवार का श्रम (जिसमें मौजूदा श्रम शक्ति के पुनरुत्पादन के साथ-साथ नई श्रम शक्ति, यानी नए सर्वहारा वर्ग के उत्पादन में शामिल सभी घरेलू श्रम शामिल हैं, जिनकी श्रमिकों को आराम करने, अपनी ताकत पुनःप्राप्त करने और कल के काम के लिए खुद को तैयार करने हेतु आवश्यकता होती है) एक श्रमिक की श्रम शक्ति का मूल्य निर्धारित करता है। पुरुषों का संस्थागत प्रभुत्व , यानी पितृसत्ता, जिसकी जड़ें वर्तमान पूंजीवाद के तहत एक आर्थिक इकाई के रूप में एकल परिवार की सामाजिक संरचना में हैं, एक विरोधाभासी स्थिति पैदा करती है और मजदूरी की वास्तविक प्रकृति और श्रम शक्ति के मूल्य के वास्तविक निर्धारकों को इस तरह से ढक देती है कि महिलाओं का घरेलू (आवश्यक रूप से सामाजिक) श्रम उनके पतियों के लिए की जाने वाली एक निजी सेवा प्रतीत होती है , न कि श्रम शक्ति का उत्पादन और पुनरुत्पादन। यह पूंजी की बहुत बड़ी सेवा है, क्योंकि इससे न केवल पूंजीपतियों के लिए महिलाओं का सस्ता श्रम सुनिश्चित होता है (चूंकि पत्नियों की श्रम शक्ति का वास्तविक मूल्य, जिसकी गणना करने पर वह सामान्यतः और प्रथागत रूप से उसके पति के वेतन में सम्मिलित मूल्य से कहीं अधिक होगा, का भुगतान करने की आवश्यकता नहीं रह जाती), बल्कि यह पत्नियों के गुस्से और आक्रोश से भी पूंजी की रक्षा करता है और इसे पतियों के खिलाफ मोड़ देता है। इस तरह पूंजी के हित में पति और पत्नी दोनों ही पूंजी के झांसे में आ जाते हैं। यह अनजाने में पतियों को अपनी पत्नियों के दमन और शोषण में पूंजी का सह -अपराधी बना देता है।

# निष्कर्ष

आज हम देखते हैं कि पूंजीवाद (खासकर बड़े पैमाने के अत्याधुनिक उद्योगों) ने महिलाओं के लिए सामाजिक उत्पादन के दरवाजे खोल दिए हैं। लेकिन उसने ऐसा विरोधाभासी रूप में किया है जिसमें इसकी दूसरी तरफ महिलाएं पितृसत्ता के चंगुल में कैद हैं। महिलाओं की अंतिम मुक्ति पर एंगेल्स कहते हैं कि -

*"पितृसत्तात्मक परिवार की स्थापना से यह परिस्थिति बदल गई, और एकनिष्ठ वैयक्तिक परिवार की स्थापना के बाद तो और भी बड़ा परिवर्तन हो गया। घर का प्रबंध करने के काम का सार्वजनिक रूप जाता रहा। अब वह समाज की चिता का विषय न रह गया। यह एक निजी काम बन गया। पत्नी को सार्वजनिक उत्पादन के क्षेत्र से निकाल दिया गया, वह घर की मुख्य दासी बन गई। केवल बड़े पैमाने के आधुनिक उद्योग ने ही उसके लिए - पर अब भी केवल सर्वहारा स्त्री के ही लिए - सार्वजनिक उत्पादन के दरवाजे फिर खोल हैं, पर इस रूप में कि जब नारी अपने परिवार की निजी सेवा में अपना कर्तव्य पालन करती है, तब उसे सार्वजनिक उत्पादन के बाहर रहना पड़ता है और वह कुछ कमा नहीं सकती, और जब वह सार्वजनिक उद्योग में भाग लेना और स्वतंत्र रूप से अपनी जीविका कमाना चाहती है, तब वह अपने परिवार के प्रति अपना कर्तव्य पूरा करने की स्थिति में नहीं होती। और जो बात कारखाने में काम करने वाली स्त्री के लिए सत्य है, वह डाक्टरी या वकालत करने वाली स्त्री के लिए भी, यानी सभी तरह के पेशों में काम करने वाली स्त्रियों के लिए सत्य है। आधुनिक वैयक्तिक परिवार, नारी की खुली या छिपी हुई घरेलू दासता पर आधारित है।"*

समाजवाद के तहत पत्नी या स्त्री की गुलामी पूरी तरह समाप्त हो जाएगी। यह कैसे संभव होगा?[40]

---

जाहिर है, पूंजीवाद के भीतर शुरू से ही घरेलू श्रम के लिंगीकरण को लेकर विरोधाभासी प्रवृत्तियां रही हैं , जो आज के समय में और भी विरोधाभासी और दमनकारी हो गई हैं। एक तरफ पूंजीवाद सभी को - पुरुषों, महिलाओं और यहां तक कि बच्चों को भी - उत्पादन प्रक्रिया में खींच लाता है, वहीं दूसरी तरफ वह ऊपर वर्णित प्रजनन श्रम को पहले की तरह महिलाओं का निजी काम बनाए रखना चाहता है। इससे पूंजीपति वर्ग को ऐसे श्रम की कीमत न्यूनतम स्तर पर रखने या उसके एक बड़े हिस्से को बिना भुगतान के रखने में बहुत सहूलियत होती है। इस तरह हम देखते हैं कि घरेलू अवैतनिक श्रम की यह लूट ही असली वजह है, जो पूंजीवाद में पितृसत्ता को बनाए रखने की एक मुख्य प्रेरणा है।

[40] ए. बेबेल लिखते हैं, *"जैसे ही समाज उत्पादन के सभी साधनों का मालिक बन जाता है, सभी सक्षम व्यक्तियों का काम करना, लिंग की परवाह किए बिना, समाजीकृत समाज का एक बुनियादी नियम बन जाता है"* जिसमें बच्चे को जन्म देने और पालने की निजी जिम्मेदारी सामाजिक जिम्मेदारी में बदल जाती है और इस तरह निजी पारिवारिक श्रम (सफाई, सिलाई, रसोई में काम आदि) सामाजिक श्रम बन जाता है। आधुनिक वैयक्तिक परिवार के टूटने का ठीक यही मतलब है। बेबेल आगे लिखते हैं, *"श्रम के बिना समाज का कोई अस्तित्व नहीं हो सकता। इसलिए यह मांग करना उचित है कि जो लोग अपनी आवश्यकताओं को पूरा करना चाहते हैं, उन्हें अपनी शारीरिक और मानसिक क्षमता के अनुसार काम भी करनी चाहिए।"* इससे महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता मिलेगी, जिसके आधार पर वे पुरुषों के अधीन अपनी गुलामी की बेड़ियों को तोड़ सकेंगी। यह सच्चे प्यार की बुनियाद भी खड़ा करेगा और समाज पहली बार एक सच्चे एकनिष्ठ संबंध को देखेगा।

*"आज अधिकतर परिवारों में, कम से कम मिल्की वर्गों में, पुरुष को जीविका कमानी पड़ती है और परिवार का पेट पालना पड़ता है, और इससे परिवार के अंदर उसका आधिपत्य कायम हो जाता है और उसके लिए किसी कानूनी विशेषाधिकार की आवश्यकता नहीं पड़ती। परिवार में पति बुर्जुआ होता है, पत्नी सर्वहारा की स्थिति में होती है। परंतु उद्योग-धंधों के संसार में सर्वहारा जिस आर्थिक उत्पीड़न के बोझ के नीचे दबा हुआ है, उसका विशिष्ट रूप केवल उसी समय स्पष्ट होता है, जब पूंजीपति वर्ग के तमाम कानूनी विशेषाधिकार हटाकर अलग कर दिए जाते हैं और कानून की नजरों में दोनों वर्गों की पूर्ण समानता स्थापित हो जाती है। जनवादी जनतंत्र दोनों वर्गों के विरोध को मिटाता नहीं है, इसके विपरीत, वह तो उनके लिए लड़कर फैसला कर लेने के वास्ते मैदान साफ कर देता है। इसी प्रकार आधुनिक परिवार में नारी पर पुरुष के आधिपत्य का विशिष्ट रूप, और उन दोनों के बीच वास्तविक सामाजिक समानता स्थापित करने की आवश्यकता तथा उसका ढंग, केवल उसी समय पूरी स्पष्टता के साथ हमारे सामने आएंगे, जब पुरुष और नारी कानून की नजर में बिल्कुल समान हो जाएंगे। तभी जाकर यह बात साफ होगी कि स्त्रियों की मुक्ति की पहली शर्त यह है की पूरी नारी जाति फिर से सार्वजनिक श्रम में प्रवेश करें, और इसके लिए यह आवश्यक है कि समाज की आर्थिक इकाई होने का वैयक्तिक परिवार का गुण नष्ट कर दिया जाए।"*

ये शब्द स्वतः ही उत्पादन के साधनों के सामाजिक स्वामित्व और निजी संपत्ति के उन्मूलन का प्रश्न उठाते हैं। इस तरह हम देख सकते हैं कि एकनिष्ठता (मोनोगैमी) और पितृसत्तात्मक परिवार की नींव कैसे रखी गई और आज इसकी क्या स्थिति है। क्या इस युग की भावी सामाजिक क्रांति, पूंजीवाद का विनाश जिसका उद्देश्य होगा, इसके वर्तमान आर्थिक आधार को पूरी तरह से मिटा देगी? हमारा उत्तर है - हाँ, यह इसे पूरी तरह से मिटा देगी। आइए देखें कि एंगेल्स इसका उत्तर कैसे देते हैं -

*"अब हम एक ऐसी सामाजिक क्रांति की ओर अग्रसर हो रहे हैं जिसके परिणामस्वरुप एकनिष्ठ विवाह का वर्तमान आर्थिक आधार उतने ही निश्चित रूप से मिट जाएगा, जितने निश्चित रूप से एकनिष्ठ विवाह की पूरक, वेश्यावृत्ति का आर्थिक आधार मिट जाएगा। एकनिष्ठ विवाह की प्रथा एक व्यक्ति के - और वह भी एक पुरुष के - हाथों में बहुत-सा धन एकत्रित हो जाने के कारण, और उसकी इस इच्छा के फलस्वरुप उत्पन्न हुई थी कि वह यह धन किसी दूसरे की संतान के लिए नहीं, केवल अपनी संतान के लिए छोड़ जाए। इस उद्देश्य के लिए आवश्यक था कि स्त्री एकनिष्ठ रहे, परंतु पुरुष के लिए यह आवश्यक नहीं था। इसलिए नारी की एकनिष्ठता से पुरुष के खुले या छिपे बहुपत्नीत्व में कोई बाधा नहीं पड़ती थी। परंतु आने वाली सामाजिक क्रांति स्थाई दायाद्य धन-संपदा के अधिकार भाग को - यानी उत्पादन के साधनों को - सामाजिक संपत्ति बना देगी और ऐसा करके अपनी संपत्ति को बच्चों के लिए छोड़ जाने की इस सारी चिता को अल्पम कर देगी। ... उत्पादन के साधनों के समाज की संपत्ति बन जाने से वैयक्तिक परिवार समाज की आर्थिक इकाई नहीं रह जाएगा।*

*घर का निजी प्रबंधन सामाजिक उद्योग-धंधा बन जाएगा। बच्चों का लालन-पालन एक सार्वजनिक विषय हो जाएगा। समाज सब बच्चों का समान पालन करेगा, चाहे वे विवाहित की संतान हों या अविवाहित की।"*

हम यह भी जोड़ना चाहेंगे कि इससे न केवल पितृसत्ता और वेश्यावृत्ति समाप्त होगी, बल्कि पृथ्वी पर पहला सच्चा एकनिष्ठ परिवार भी आएगा और पुरुष भी पहली बार सच्चे एकनिष्ठ बनेंगे, क्योंकि निजी संपत्ति के उन्मूलन के साथ ही मज़दूरी प्रथा, सर्वहारा वर्ग और अतः वे परिस्थितियां भी गायब हो जाएंगी जो महिलाओं को पैसे के लिए खुद को समर्पित करने हेतु मजबूर करती हैं। हालांकि आज यह बताना असंभव है कि भविष्य में पूंजीवाद के (आसन्न) विनाश के बाद उभरने वाले वर्गहीन समाज में यौन संबंधों की प्रकृति क्या होगी, हम केवल इतना कह सकते हैं कि यह पूरी तरह से प्रेम पर आधारित होगा, और प्रेम के अलावा किसी और चीज पर नहीं। यहाँ हमें युवा मार्क्स के पुरुष-महिला संबंध और विवाह के रूप में प्रेम के विचार को सुनना चाहिए। 1844 की पांडुलिपियों में, मार्क्स लिखते हैं –

*"इस रिश्ते के चरित्र से यह पता चलता है कि एक प्रजाति-प्राणी (species-being) के रूप में मनुष्य, मनुष्य के रूप में, कितना मनुष्य बन पाया है और खुद को समझ पाया है;* ***पुरुष से महिला का रिश्ता, मनुष्य से मनुष्य का सबसे स्वाभाविक रिश्ता है।*** *इसलिए यह इस बात को प्रकट करता है कि आदमी का स्वाभाविक व्यवहार किस हद तक मानवीय हो पाया है ... यह रिश्ता इस बात को भी प्रकट करता है कि किस हद तक मनुष्य की ज़रूरत एक मानवीय ज़रूरत बन गई है; इसलिए, किस हद तक, मनुष्य के रूप में कोई दूसरा मनुष्य उसके लिए एक ज़रूरत बन गया है; किस हद तक एक ही साथ वह अपने व्यक्तिगत अस्तित्व में एक सामाजिक प्राणी है।"*[41]

इस बिंदु पर, हमें यह समझने में कोई समस्या नहीं होनी चाहिए कि महिला आंदोलन स्वाभाविक रूप से मार्क्स-एंगेल्स और लेनिन द्वारा परिकल्पित वर्गहीन समाज बनाने के लिए मजदूर वर्ग द्वारा लड़े जा रहे संघर्ष के साथ एक हो जाता है। हम देख सकते हैं कि महिला आंदोलन की स्वाभाविक दिशा किस तरह वर्गहीन समाज बनाने की ओर झुकी हुई है। केवल ऐसे समाज में, स्वाभाविक रूप से बलात्कार और यौन हिंसा या किसी भी तरह की वेश्यावृत्ति और अधीनता के लिए कोई जगह नहीं होगी, और न ही वह प्रवृत्ति और शक्ति समाज में मौजूद होगी जो एक महिला को एक माल और केवल यौन वस्तु के रूप में पेश करती है।

इसलिए आज जरूरत है महिला मुक्ति के लिए एक स्पष्ट क्रांतिकारी रास्ता अपनाने की जो सभी बुर्जुआ रास्तों से अलग हो। दुर्भाग्य से सच तो यह है कि बलात्कार और यौन हिंसा जल्द ही रुकने वाली नहीं है, बल्कि जब तक महिलाओं को माल और सेक्स ऑब्जेक्ट बनाने के विभिन्न माध्यम इसी गति से बढ़ते रहेंगे और इन सबके लिए जिम्मेदार व्यवस्था कायम रहेगी और फलती-फूलती रहेगी, तब तक ये कभी नहीं रुकेंगी। अगर हम वाकई महिलाओं पर बढ़ते अत्याचारों से चिंतित हैं तो हमें उन सभी संरचनाओं का विरोध करना होगा और उन्हें नष्ट करना होगा जो महिलाओं पर वर्चस्व और

[41] कार्ल मार्क्स, '*1844 की आर्थिक और दार्शनिक पांडुलिपियां*'

उनके वस्तुकरण (कमोडिफिकेशन) को बढ़ावा देती हैं। अगर इसके लिए समाज में क्रांति की जरूरत है, जो कि है, तो हमें उसके लिए भी तैयार रहना होगा। आज पूरी दुनिया में यही स्थिति है। इसलिए हमें बार-बार इतिहास के 'मृत्युदंड' की ओर लौटना पड़ेगा। मानवता के भविष्य की चिता हमें इस 'मृत्युदंड' से बचने के लिए एकमात्र रास्ता अपनाने के लिए मजबूर करती है, और इसके लिए हमें इस मृत्युदंड के असली हकदार और इतिहास के मुख्य अपराधी, जो कोई और नहीं बल्कि पूंजीवाद-साम्राज्यवाद है, के गले में फंदा डालना होगा और अंततः इतिहास के आदेश का निष्पादन करना होगा। इसके अलावा कोई रास्ता नहीं है।

हमें उम्मीद है कि इस सम्मेलन में भाग लेने वाले साथी हमारे निष्कर्ष से सहमत होंगे। आज की परिस्थितियां खुद ही यह उद्घोषित कर रही हैं कि इतिहास के आदेश का अनुपालन स्वयं इतिहास के साथ और उसे आगे बढ़ाने वाली शक्तियों के उन्मुक्त विकास के रूप में एक ऐसा न्याय होगा, जो पूरी मानवता के हित में है। महिलाओं की मुक्ति अपरिहार्य है, लेकिन यह याद रखना होगा कि यह मुक्ति केवल उन उत्पादक शक्तियों की मुक्ति से ही संभव है जो पूंजी के गुलामी भरे सामाजिक संबंधों में कैद और नष्ट हो रही हैं। आइए, हम सब मिलकर पूंजी सहित गुलामी की सभी जंजीरों को तोड़ने के लिए आगे बढ़ें। अन्यथा, हम सबको उस दंड का भागी बनना पड़ेगा, जो पूंजी की विनाशलीला के रूप में इस 'मृत्युदंड' से भी अधिक भयानक होगी, तथा मानवता को 9 अगस्त 2024 और 16 दिसंबर 2012 से भी अधिक काले दिनों का सामना करना पड़ेगा। जो भी हो, हमारे भविष्य की दोहरी और विपरीत संभावनाएं हमारे सामने मुंह बाए खड़ी हैं। या तो पूंजी व सभी प्रकार के शोषण का विनाश या स्वयं मानवता का विनाश, यहां से आगे बढ़ने का फैसला हमारे हाथ में है।

आइये हम लेनिन के उन शब्दों के साथ अपनी बात समाप्त करें जो रूसी बोल्शेविक क्रांति की दूसरी वर्षगांठ पर कहे गए थे -

> *"उन झूठ बोलने वालों का नाश हो जो आज सबके लिए स्वतंत्रता और समानता की बात कर रहे हैं, जबकि एक उत्पीड़ित लिंग है, जबकि उत्पीड़क वर्ग मौजूद हैं, जबकि पूंजी और शेयरों का निजी स्वामित्व है, जबकि खाए-अघाए लोग हैं जिनके पास ज़रूरत से अधिक रोटियां हैं जो भूखों को गुलामी में रखते हैं। सभी के लिए स्वतंत्रता नहीं, सभी के लिए समानता नहीं, बल्कि एक संघर्ष उत्पीड़कों और शोषकों के खिलाफ, उत्पीड़न और शोषण की हर संभावना का खात्मा - यही हमारा नारा है! ... उत्पीड़ित लिंग के लिए स्वतंत्रता और समानता! उत्पीड़कों के खिलाफ संघर्ष, पूंजीपतियों के खिलाफ संघर्ष! यही हमारा संग्रामी नारा है, यही हमारा सर्वहारा सत्य है, पूंजी के खिलाफ संघर्ष का सत्य।"*[42]

[42] लेनिन, *'सोवियत सत्ता और महिलाओं की स्थिति'* (1919)